काचरी

शुष्क क्षेत्र में अनुसंधान एवं तकनीकी विकास

दिलीप कुमार समादिया

भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान
बीकानेर (राजस्थान)

dkpjh

'kq"d {ks= esa vuqla/kku ,oa rduhdh fodkl

Mk- fnyhi dqekj lekfn;k

Hkk-Ñ-vu-i-&dsUnzh; 'kq"d ckxokuh laLFkku
chdkusj ¼jktLFkku½

lanHkZ % **dkpjh & 'kq"d {ks= esa vuqla/kku ,oa rduhdh fodkl ¼2015½]**
तकनीकी पुस्तिका – 58

izdk'kd % **Mk- lrh'k dqekj 'kekZ**
निदेशक
भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान
बीछवाल, बीकानेर–334006
राजस्थान, भारत
दूरभाष : 0151-2250147, 2250960, फैक्स: 0151-2250145
ई–मेल : ciah@nic.in
वेबसाइट: ciah.ernet.in

ys[kd % **Mk- fnyhi dqekj lekfn;k**
प्रधान वैज्ञानिक (बागवानी)

rduhdh lg;ksx % श्री पी. पी. पारीक
श्री एम. के. जैन
श्री संजय पाटिल
श्री बी. आर. खत्री

eqæd % युगान्तर प्रकाशन प्रा. लि., डब्ल्यु एच–23, मायापुरी, नई दिल्ली–110064

डॉ. सतीश कुमार शर्मा
निदेशक

Hkk-Ñ-vuq-i-&dsUnzh; 'kq"d ckxokuh laLFkku
chdkusj ¼jktLFkku½

izkDdFku

देश की उत्तर–पश्चिमी गर्म मरुस्थलीय क्षेत्र की जलवायु कृषि–बागवानी के लिए अत्यधिक प्रतिकूल है। यहाँ की परम्परागत खेती में स्थानीय पेड़–पौधों व फसलों का मानव जीवन, पशुधन तथा आजीविका में विशेष स्थान है। इस क्षेत्र की वर्षा आधारित उत्पादन प्रणालियों में काचरी एक महत्वपूर्ण सब्जी फसल है। इस अल्पप्रचलित सब्जी फसल को व्यावसायिक स्तर तक ले जाने के लिए संस्थान ने सर्वप्रथम वर्ष 1994 से इसके जननद्रव्य संग्रहण एवं संरक्षण के साथ–साथ किस्मों तथा उत्पादन तकनीकियाँ विकसित करने के लिए सघन अनुसंधान कार्य किये हैं।

संतुलित आहार के लिए फल एवं सब्जियाँ महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। अभी तक इस क्षेत्र के किसान बागवानी में सब्जी फसल उत्पादन एवं प्रबंधन की तकनीकियों से कम जागरूक हैं इसलिए इस पुस्तिका में उपलब्ध जानकारियाँ काचरी की वैज्ञानिक ढंग से खेती के लिए लाभदायक सिद्ध होगी। शोध वैज्ञानिक एवं लेखक डॉ. दिलीप कुमार समादिया ने विगत 20 वर्षों से शुष्क क्षेत्रीय सब्जी फसलों पर सतत् अनुसंधान कार्यों के परिणामस्वरूप प्रतिकूल जलवायु में काचरी उत्पादन के लिए नवोन्वेषित एवं उन्नत तकनीकियाँ विकसित की हैं जिनको इस पुस्तिका में सहज रूप में संग्रहित किया गया है। लेखक ने इसके वैज्ञानिक तथ्यों के साथ–साथ फसल उत्पादन के लिए जलवायु के अनुरूप विकसित किस्मों एवं तकनीकियों का विस्तार से वर्णन भी किया है।

हिन्दी भाषा में सहज एवं सरल शब्दों में लिखी यह तकनीकी पुस्तिका **"dkpjh & 'kq"d {ks= esa vuqla/kku ,oa rduhdh fodkl"** किसानों, सब्जी उत्पादकों, कृषि प्रसार एवं प्रशिक्षण अधिकारियों, विद्यार्थियों, शिक्षकों तथा वैज्ञानिकों के लिए उपयोगी सिद्ध होगी। अतः मैं, लेखक को इस महत्वपूर्ण कार्य के लिए हार्दिक धन्यवाद और शुभकामनाऐं देता हूँ।

¼lrh'k dqekj 'kekZ½

ÁLrkouk

भारत के उत्तर–पश्चिमी शुष्क क्षेत्र में बागवानी विकास के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली द्वारा अन्य नीतिगत फैसलों के साथ यह भी निश्चित किया गया कि यहाँ की मरूस्थलीय जलवायु में पैदा होने वाले स्थानीय पेड़– पौधों व फसलों जिनका उपयोग सब्जियों के रूप में किया जाता है, उन पर भी प्राथमिकता से कार्य किये जाये। इसके अंतर्गत केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान में सर्वप्रथम वर्ष 1994 में सब्जियों पर अनुसंधान के लिए परियोजनाओं के प्रारूप तैयार कर उन पर कार्य आरंभ किये। अनुसंधान के प्रथम चरण में मरूस्थलीय क्षेत्र की प्रतिकूल जलवायु व कम वर्षा में पैदा होने वाली फसलों जैसे – काचरी, काकड़िया, मतीरा, टिंडा व ग्वारफली एवं बहु–उपयोगी पेड़–पौधों जैसे – खेजड़ी (सांगरी), फोग, खींप, ग्वारपाठा व तूम्बा को शुष्क क्षेत्रीय सब्जियों के अंतर्गत चयनित किया गया, जिसका मुख्य उद्‌देश्य इनकी वैज्ञानिक तरीकों से व्यवस्थित खेती के लिए आवश्यक किस्मों एवं उत्पादन तकनीकियाँ विकसित कर इन्हें व्यावसायिक स्तर पर प्रसारित कर किसानों तक पहुँचाना रखा गया।

सर्वप्रथम केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर में वर्ष 1994 से सूखा सहिष्णु, बहु–उपयोगी एवं अल्पप्रचलित काचरी (कुकुमिस प्रजातियाँ) के स्थानीय जननद्रव्यों को संग्रहित कर उनका विधिवत् मूल्यांकन पश्चात् फसल संरक्षण एवं सुधार कार्य किये गये। काचरी प्रजाति के लगभग 600 मूल्यांकित जननद्रव्यों में से अतिउपयोगी एवं बहुलक्षणीय 68 संततियों (लाइनों) को संरक्षित एवं किस्मगत सुधार के लिए चयनित किया गया जिससे विभिन्न लक्षणों तथा आवश्यकता के अनुरूप उन्नत किस्में विकसित की जा सकें। काचरी फसल पर अनुसंधान कार्यों (1994–2014) के परिणामस्वरूप व्यावसायिक उत्पादन के लिए किस्मों के साथ–साथ नवोन्वेषित एवं उन्नत तकनीकियाँ विकसित की गयी हैं जिससे अब किसान, प्रतिकूल जलवायु में इनका समावेश "खेजड़ी आधारित फसल उत्पादन प्रक्षेत्र प्रबंधन व्यवस्थाओं" में अपनाकर उत्तम गुणवत्तायुक्त फल एवं अधिक उपज कम संसाधनों में भी ले सकेगें।

संस्थान में विगत 20 वर्षों के सतत् सब्जी अनुसंधान एवं तकनीकी विकास कार्यों के परिणामस्वरूप विकसित की गयी प्रौद्योगिकी सूचनाओं को पुस्तिका ‘**dkpjh & 'k"d {k= e vu l /kku ,o rduhdh fodkl*** में इस उद्‌देश्य से संकलित किया गया है कि यह सूचनाऐं वैज्ञानिकों, तकनीकी अधिकारियों व किसानों तक सरलता से प्रसारित हो कर इनका अधिक से अधिक उपयोग व प्रचार–प्रसार हो सके। वर्ष 1994 से 2014 तक काचरी पर अनुसंधान कार्य एवं इस पुस्तिका के प्रकाशन में दिए गये अमूल्य सहयोग के लिए मैं, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली तथा केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर के संबंधित सभी पदाधिकारियों, निदेशकों, वैज्ञानिकों, तकनीकी अधिकारियों तथा कर्मचारियों का सदैव आभारी रहूँगा। आप सभी के सहयोग से ही इस क्षेत्र में सब्जियों की खेती को बढ़ावा देने के लिए उन्नत किस्मों एवं तकनीकों का विकास कर इन्हें प्रसारित करने का मुझे यह सुअवसर मिला है।

डॉ. दिलीप कुमार समादिया
शोध वैज्ञानिक एवं लेखक

vuØef.kdk

Øe la[;k	fooj.k	i"B la[;k
1.	काचरी – एक परिचय	1
2.	वानस्पतिक अध्ययन	2
3.	जैव–विविधता संग्रहण एवं संरक्षण	4
4.	उन्नत किस्मों का विकास	12
5.	मरूस्थलीय जलवायु	18
6.	फसल प्रक्षेत्र प्रबंधन तकनीक	19
7.	प्रक्षेत्र विकास तकनीक	20
8.	खेत की तैयारियाँ	22
9.	खाद–उर्वरक प्रबंधन तकनीक	22
10.	फसल बुवाई तकनीक	23
11.	जल प्रबन्धन	25
12.	नवोन्वेषित अंतराशस्य क्रियाऐं	36
13.	फसल सुरक्षा प्रबन्धन	38
14.	उत्पाद प्रबंधन एवं प्रसंस्करण	42
15.	बीज उत्पादन तकनीक	44

dkpjh % ’k"d {k= e vul/kku ,o rduhdh fodkl

देश की उत्तर–पश्चिमी गर्म मरुस्थलीय क्षेत्र की जलवायु कृषि–बागवानी के लिए अत्यधिक प्रतिकूल है। यहाँ की परम्परागत खेती में वर्षा आधारित स्थानीय फसलों जैसे – काचरी, काकड़िया, मतीरा, टिंडा व ग्वारफली तथा बहु–उपयोगी पेड़–पौधों जैसे – खेजड़ी (सांगरी), फोग, खींप, ग्वारपाठा व तूम्बा इत्यादि का विशेष स्थान है। इनका मानव जीवन, पशुधन एवं आजीविका में अत्यधिक महत्व है। इन बागवानी उपयोगी फसलों में काचरी एक महत्वपूर्ण सब्जी है। इस अल्पप्रचलित सब्जी फसल को व्यावसायिक स्तर तक ले जाने के लिए संस्थान ने सर्वप्रथम वर्ष 1994 से इसके जननद्रव्य संग्रहण एवं संरक्षण के साथ–साथ किस्मों तथा उत्पादन तकनीकियाँ विकसित करने के लिए सघन अनुसंधान कार्य किये हैं। संस्थान में 20 वर्षों के सतत् अनुसंधान कार्यों के परिणामस्वरूप इस समय काचरी एक बहु–उपयोगी, लाभकारी एवं व्यावसायिक सब्जी का स्थान ले चुकी है तथा शुष्क एवं अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में इसकी ग्रीष्म एवं वर्षाकालीन फसल से सफलतापूर्वक उत्पादन किया जा रहा है।

dkpjh & ,d ifjp;

मरूस्थलीय अँचल में लोगों के खान–पान, तीज–त्यौहार व लोकगीत, धार्मिक पूजन सामग्री आदि में काचरी का विशेष महत्व है। यहाँ प्रवासी रिश्तेदारों को उपहार स्वरूप इसके सूखे फलों की सौगात (दिबड़ी) देने का रिवाज होता है। सदियों से परम्परागत खेती में इसको घटक फसल के रूप में अपनाना, ताजा फलों का सब्जी, चटनी व सलाद में उपयोग तथा सूखे फलों को संरक्षित कर वर्षभर सब्जी व चटनी के लिए उपयोग, बाजार में ताजा व सूखे फलों का व्यवस्थित व्यवसाय, सूखे फलों के चूर्ण का व्यावसायिक स्तर पर मसाला पाउडर में प्रयोग, औषधीय गुणधर्म इत्यादि काचरी की बहु–उपयोगिता को सिद्ध करते हैं।

काचरी के पौधे वर्षा ऋतु के आगमन के साथ ही औरण, चारागाह व परती भूमि, घरों व बाड़ों एवं खेत की मेड़ों, फसलों व बगीचों में स्वतः ही उग जाते हैं जो कि वानस्पतिक वृद्धि के साथ बेलनुमा होते हैं तथा संरक्षण मिलने पर इन पर छोटे–छोटे फल लगते हैं। वर्षा आधारित परम्परागत मिश्रित या व्यवस्थित फसल उत्पादन प्रणालियों में इसके बीजों की बुवाई छिटकाँव पद्धति से की जाती है तथा बारानी फसलों की कटाई पश्चात् काचरी के फलों को संग्रहित किया जाता है। राजस्थान के मरूस्थलीय जलवायु की स्थानीय फसल उत्पादन व्यवस्थाओं मुख्यतः बाजरा, ग्वार, मोठ, मूँग, चँवला व तिल के साथ काचरी की वृहद क्षेत्र में बुवाई कर उत्पादन किया जाता है। संस्थान द्वारा विकसित उन्नत किस्मों एवं नवोन्वेषित तकनीकों के प्रचार–प्रसार के साथ काश्तकारी जागरुकता से काचरी की व्यवस्थित एवं सिंचित खेती देश के उत्तर–पश्चिमी शुष्क एवं अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में ग्रीष्म व वर्षाकालीन फसल के रूप में की जाने लगी है। वर्तमान में इसकी व्यावसायिक खेती राजस्थान के बीकानेर, नागौर, चुरू, पाली, जोधपुर, बाड़मेर, भीलवाड़ा, सीकर, जयपुर एवं गंगानगर तथा पास के राज्य पंजाब व हरियाणा के कुछ क्षेत्रों में हो रही है। काचरी की वर्ष में दो बार व्यवस्थित फसल उत्पादन से बाजार में अप्रैल से दिसम्बर तक इसके फलों की उपलब्धता बनी रहती है तथा वर्तमान में इसका अनुमानित बुवाई क्षेत्र 1500–2000 हैक्टेयर/वर्ष है।

संस्थान द्वारा विकसित एवं प्रसारित काचरी की उन्नत किस्मों व तकनीकियों को अपनाने से किसानों

के आर्थिक लाभ की दर में विगत 2005 से आश्चर्यजनक वृद्धि हुई है। काचरी इस क्षेत्र की प्रमुख फसल बन चुकी है तथा वर्तमान में अध्ययनों से यह पाया गया कि कम लागत एवं संसाधनों से एक हैक्टेयर क्षेत्र से 75000–150000 रूपये प्राप्त कर रहे हैं। परम्परागत खेती की 6–7 फसलों के साथ इसकी अल्प अवधि में अधिक उत्पादक क्षमता, प्रतिकूल जलवायु की स्थितियाँ व सूखा सहन करने की क्षमता तथा वैज्ञानिक शोध से विकसित उन्नत किस्मों एवं तकनीकियों से इसकी वृहद स्तर पर खेती की संभावनाऐं आँकी गई हैं। अतः संस्थान द्वारा काचरी की खेती को बढ़ाने के लिए व्यापक स्तर पर प्रचार–प्रसार तथा बीज उत्पादन एवं वितरण के कार्य किये जा रहे हैं। बहु–उपयोगी महत्त्वताओं एवं कम लागत से अधिक आर्थिक लाभ तथा वर्ष में दो फसल उत्पादन क्षमता के कारण यह मरूअँचल की अतिलाभकारी वनस्पति है। इसलिए इसको व्यावसायिक फसल के रूप में स्थापित करने के लिए इसकी विकसित उन्नत किस्मों को क्रमबद्ध वैज्ञानिक खेती में अपनाना आवश्यक है।

okuLifrd v/;;u

काचरी (kachri) कुष्माण्ड कुल का (cucurbitaceae) एक वर्षीय, मौसमी व फैलने वाली शाकीय लता या बेलदार पौधा है। यह वानस्पतिक समूह में कुकुमिस मेलो की जंगली, अवर्णित एवं अप्रचलित प्रजाति केलोसस/एग्रेटिस (non-dessertic form of *Cucumis melo* var. *callosus* / *agrestis*) अथवा पर्यायरूपी कुकुमिस केलोसस या कल्चर (*Cucumis callosus* or culture) के नाम से संकलित है तथा इसके गुणसूत्रों की संख्या 2 एन = 24 है। देश के विभिन्न भागों की स्थानीय भाषा में इसको काचरिया, काचर, मट–काचर, काचरा, सैंद, छोटी सैंद, बड़ी सैंद, सैंदा, सेंघा, पथेया, गोरड़ी इत्यादि के नाम से पहचानी जाती है। संस्कृत में इसे चित्र, चित्रफला एवं मृगाक्षी तथा अंग्रेजी में मैंगो मेलन (mango melon) के नाम से वर्णित किया है।

प्राचीन भारतीय ग्रंथों में काचरी के गुणों जैसे फलों वाले पौधों का उल्लेख है। आज भी जंगली अवस्था में इसके पौधे प्राकृतिक वन क्षेत्रों, परती एवं अनुपयोगी कृषि भूमि में पाये जाते हैं। इसलिए यह कहा जा सकता है कि इसका उद्‌गम स्थल भारतवर्ष ही है। जंगली अवस्था में इस प्रजाति के पौधे प्रायः वर्षा ऋतु में स्वतः ही पनपते हैं एवं अधिकांशतः शुष्क व अर्द्धशुष्क गर्म जलवायु, मैदानी एवं 500 मीटर ऊँचाई तक के पर्वतीय क्षेत्रों में पाये जाते हैं। लेकिन शुष्क व अर्द्धशुष्क क्षेत्रों की खरीफ फसलों विशेषकर बाजरा, ज्वार, मक्का व ग्वार के खेतों में किसान इसे अल्पप्रचलित एवं उपयोगी वनस्पति के रूप में ध्यान देते हैं तथा इसके परिपक्व फलों को सब्जी व चटनी एवं खट्‌ठे–मीठे पके फलों को कच्चा खाने के उपयोग में लिया जाता है। इसके छोटे, खट्‌ठे, अधिक बीजयुक्त एवं हल्की खंडित धारियों व हरे कठोर छिलके वाले फलों को काचरी के नाम से जाना जाता है तथा मुख्यतः सब्जी, चटनी, अचार व सुखाने के उपयोग में लिया जाता है। जब कि बड़े फलों को मट–काचर के नाम से जाना जाता है जो कि खटठे–मीठे, अधिक गूदे व कम बीज वाले होते हैं एवं छिलका हल्का केसरिया–पीला व पतला होता है तथा पके फलों को सलाद व सब्जी के उपयोग में लिया जाता है।

कुष्माण्ड कुल की इस अल्पवर्णित प्रजाति – काचरी के पौधे एकवर्षीय व मौसमी जो कि लगभग 4–6 महीनों की अल्पआयु के होते हैं। पौधों के तने पतले, लंबे व रेंगने वाले जिन पर 5–10 तक शाखाऐं एवं इनकी कई उपशाखाऐं होती हैं तथा यह सघन होते हैं। इनकी हरी से गहरी हरी रंग की पत्तियाँ हृदयाकार पर्णपटल व 3–5 खंडों वाली होती हैं। मध्यम आकार (13.82–14.64 × 14.75–16.42 सेन्टीमीटर) की पत्तियाँ खुरदरी, हल्के से सघन

रोएयुक्त जिनके डंठलों की लंबाई 10.35–13.44 सेन्टीमीटर होती है। पौधों में नर व मादा फूल अलग–अलग गाँठों पर आते हैं एवं इनकी प्रारम्भिक अवस्था में पहले कुछ गाँठों पर नर फूल ततपश्चात् मादा फूल आते हैं तथा फूल आने की यह प्रक्रिया उपशाखाओं पर भी चक्रीय क्रम में होती है। सामान्यतः एक स्वस्थ पौधे पर 265–425 नर व 45–155 मादा फूल पाये गये हैं। नर (2.38–3.25 × 2.46–3.39 सेन्टीमीटर) व मादा (3.15–3.44 × 2.97–3.58 सेन्टीमीटर) फूल आकार में छोटे तथा हल्के पीले रंग के होते हैं। मादा फूलों का अंडाशय प्रायः आकार में छोटा जिसकी लंबाई 0.85–1.75 सेन्टीमीटर व व्यास 0.38–0.85 सेन्टीमीटर होता है एवं इन पर सघन रोए होते हैं। फूल प्रातःकाल 5:00–10:00 बजे के मध्य खिलते हैं एवं इनमें पर–परागण की क्रिया से फल जमाव होता है। फूलों की वर्तिकाग्र परागण के समय से 2 घण्टे पहले एवं 2 घण्टे बाद तक ग्राही बनी रहती है। परागण क्रिया प्रातःकाल 10:00 बजे तक उच्चतम स्तर पर रहती है एवं इस समय तापमान 22^0–30^0 सेल्सियस तक होता है तथा इसी समयावधि में फल जमाव भी सर्वाधिक पाये गये हैं।

सामान्यतः काचरी के बीजों का अंकुरण 25^0–35^0 सेल्सियस तापमान पर सर्वाधिक एवं बुवाई के 3–4 दिनों में शीघ्रता से हो जाता है। अंकुरण के पश्चात् पौधों की प्रारंभिक वानस्पतिक वृद्धि धीमी व कम होती है लेकिन प्रथम नर व मादा फूल क्रमशः 27–35 एवं 32–38 दिनों की अवस्था से खिलना प्रारंभ हो जाते हैं तथा इसी समयावधि से पौधों में अधिक वानस्पतिक वृद्धि भी प्रारंभ हो जाती है एवं यह बेलनुमा आकार लेते हैं। पौधे सघन एवं कम फैलने वाले परंतु अधिक उपशाखाओं वाले होते हैं इसलिए इन पर नर व मादा फूलों की संख्या भी अधिक होती है। फल जमाव चक्रीय व्यवस्था में होता है एवं इनकी संख्या (5–145) में अत्यधिक अंतर पाया गया है। फल विविध आकार–प्रकार के होते हैं जो कि मुख्यतः अण्डाकार, गोल या दीर्घायताकार एवं वजन 5 से 125 ग्राम तक पाया गया है। पौधों से फलों की पहली तुड़ाई बुवाई के 70–80 दिनों बाद प्रारम्भ हो जाती है। विकसित फल प्रारम्भिक अवस्था में कड़वे होते हैं परंतु जमाव के 30–35 दिनों पश्चात् उपयोगी एवं तुड़ाई योग्य हो जाते हैं। पूर्ण विकसित एवं पके फलों को चटनी, सब्जी व सलाद अथवा सुखाकर उपयोग में लिया जाता है। फलों में बीज अधिक मात्रा में होते हैं एवं इनको भी खाने व औषधीय प्रयोग में लिया जाता है।

काचरी गर्म जलवायु वाली फसल है। इसके पौधे शुष्क एवं अर्द्धशुष्क जलवायु वाले क्षेत्रों में अच्छी तरह पनपते हैं तथा इसकी ग्रीष्म एवं वर्षाकालीन फसल के रूप में सफलतापूर्वक खेती की जा सकती है। सर्दियों में इन पर अत्यधिक ठण्ड व पाले की स्थिति का प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है, जिससे पौधे पूर्णतया नष्ट हो जाते हैं। काचरी के पौधे अत्यधिक सूखा सहिष्णु तथा अधिक तापमान वाली वातावरणीय स्थितियों को सहन करने वाले होते हैं। इसीलिए कम वर्षा (250–300 मिलिमीटर) अथवा सीमित सिंचाई जल जैसी परिस्थितियों में भी इसके पौधों में वानस्पतिक विकास एवं फल उत्पादन अच्छा रहता है। अत्यधिक एवं लगातार वर्षा वाली स्थितियाँ फसल उत्पादन के लिए उपयुक्त नहीं हैं। फसल बुवाई के समय बीजों में शीघ्रता एवं अधिकतम अंकुरण के लिए 20^0–22^0 सेल्सियस तापमान आवश्यक है तथा 32^0–38^0 सेल्सियस तापमान पौधों में वानस्पतिक वृद्धि एवं फल जमाव के लिए सर्वाधिक उपयुक्त है, परंतु गर्म मरूस्थलीय अँचल में जहाँ अधिकतम तापमान 45^0–48^0 सेल्सियस तक रहता है वहाँ भी इसकी सफलतापूर्वक खेती होती है।

काचरी फलों में पोषक तत्व अधिक मात्रा में पाये जाते हैं तथा इसके 100 ग्राम ताजा खाद्य भाग में 88. 25% जल, 7.45% कार्बोहाइड्रेट, 0.28% प्रोटीन, 1.28% वसा एवं 1.21% रेशा होता है। इसके खनिज

लवण युक्त 1.46 ग्राम कुल भस्म (राख) में 0.09 मिलीग्राम केल्शियम, 0.0029 मिलीग्राम फॉस्फोरस, 0.182 मिलीग्राम लौह, 0.0046 मिलीग्राम ताँबा, 0.052 मिलीग्राम जस्ता एवं 0.058 मिलीग्राम मैंगनीज तत्व होते हैं। ताजा फलों की 100 ग्राम मात्रा से 29.81 मिलीग्राम विटामिन–सी एवं 47.24 किलो कैलोरी ऊष्मा मिलती है। इसके सूखे फल के 100 ग्राम चूर्ण में 63.68% कार्बोहाईड्रेट, 2.41% प्रोटीन, 11.00% वसा, 10.41% रेशा एवं 12.50 मिलीग्राम कुल खनिज लवण, 17.02 मिलीग्राम विटामिन–सी, 0.82 मिलीग्राम कैल्शियम, 1.56 मिलीग्राम लौह, 0.025 मिलीग्राम फॉस्फोरस, 0.04 मिलीग्राम ताँबा, 0.45 मिलीग्राम जस्ता व 0.495 मिलीग्राम मैंगेनीज तत्व होते हैं।

काचरी के फल एक विशेष स्वाद – खट्ठा–मीठा के लिए लोकप्रिय हैं तथा पौष्टिकता से भरपूर यह फल स्वादिष्ट एवं गुणकारी होते हैं। पूर्णविकसित फलों को विविध प्रकार की मिश्रित या एकल सब्जी के उपयोग में लिया जाता है। इसी तरह फलों को विशेष स्वाद की चटनी एवं अचार बनाने के काम में लिया जाता है। पूर्णपके फलों को कच्चा अथवा सलाद के रूप में खाया जाता है। काचरी फलों को वर्षभर उपयोग के लिए सुखाकर भंडारित किया जाता है तथा यह वृहद स्तर पर घरेलु एवं व्यावसायिक कार्य के रूप में होता है जिसके लिए छोटे फलों को छिलकर साबुत अथवा छल्लेनुमा आकृति में सुखाया जाता है। एक अन्य विधि में इसके छोटे फलों को बिना छिले सुखाया जाता है जिन्हें स्थानीय भाषा में **dkdfy;k** कहते हैं। सुखाकर भण्डारित की हुई काचरी का उपयोग सब्जी, चटनी व अचार अथवा चूर्ण (पाउडर) बनाकर कई तरह के सब्जी मसालों (ready to use spice powder) में किया जाता है।

मरूअँचल की अतिलोकप्रिय सब्जी, '**ipdVk**' जो कि स्थानीय पेड़–पौधों से उत्पाद के पाँच घटकों के मिश्रण [साँगरी (dehydrated tender pods of khejri), केर (dehydrated tender fruits of ker), लसोड़ा (dehydrated tender fruits of lasora), कुमट (dehydrated seeds of kumat) एवं काचरी (dehydrated fruits of kachri)] से विशेष रूप से तैयार की जाती है जिसमें काचरी एक मुख्यः घटक है। काचरी फलों एवं बीजों का उपयोग कुछ स्थानीय औषधियों में भी किया जाता है। सूखे फलों को नमक, काली मिर्च, जीरा, शक्कर व सौंठ के साथ मिलाकर एक विशेष चूर्ण बनाया जाता है जो कई प्रकार की बीमारियों विशेषकर पेट की पाचन क्रिया व कफ़ में लाभदायक है।

tlo&fofo/krk lxg.k ,o lj{k.k

गर्म मरूस्थलीय जलवायु के शुष्क व अर्द्धशुष्क क्षेत्रों की खरीफ फसलों में काचरी के पौधे स्वतः अथवा बीजों के छिंटकाँव से उगते हैं। सदियों से काश्तकार परम्परागत खेती में इस अल्पप्रचलित फसल के स्व–उत्पादित बीजों को संरक्षित कर उपयोग में लेते आ रहे हैं। बीज चयन की प्रक्रिया में किसी प्रकार का विशेष ध्यान नहीं रखा जाता है परंतु स्व–विवेक से चयनित एवं आवश्यकता के अनुरूप संग्रहित व उपयोगी फलों से बीज एकत्रित कर अगली फसल की बुवाई के लिए सुरक्षित रखने की परम्परा रही है। इस तरह उत्पादित फसल से फलों के आकार–प्रकार, स्वाद, गुणवत्ता एवं उत्पादकता में सर्वाधिक विभिन्नतायें तथा सदैव अनिश्चिततायें बनी रहती हैं। फलों की बहु–उपयोगिता के कारण पौधों को सुरक्षित रखा जाता है एवं जो भी फल लगते हैं उन्हें एकत्रित किया जाता है। कुष्माण्ड कुल की इस अल्पवर्णित वनस्पति में पर–परागण की क्रिया एवं सदियों से स्व–विवेक से चयन प्रक्रिया के परिणामस्वरूप इसके पौधों के वानस्पतिक तथा फलों के आकार–प्रकार, गुणवत्ता एवं उपज के लक्षणों में अत्यधिक जैव–विविधता पायी गई है। काचरी की जैव–विविधता पर एकीकृत वैज्ञानिक अध्ययनों के लिए सर्वप्रथम केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर में वर्ष 1994 से अनुसंधान कार्य प्रारम्भ किये गये

जिसके अंर्तगत जननद्रव्य संग्रहण व संरक्षण के साथ–साथ इसकी उन्नत किस्में विकसित करना मुख्य उद्देश्य रखा गया।

इस प्रजाति में एक पौधे पर ही नर व मादा फूल अलग–अलग गाँठों (monoecious) पर आते हैं तथा पर–परागण क्रिया से निषेचन एवं फल जमाव होता है। देश में खरबूजा प्रजाति, कुकुमिस मेलो (*Cucumis melo*) जो कि विविध एवं बहु आकार–प्रकार (polymorphic texon) के समूह जिनमें मीठे फल (dessertic melon) तथा खट्टे–मीठे व कच्चे सलाद फल (non-dessertic melon) वाली प्रजातियाँ क्रमशः खरबूजा (*Cucumis melo*) तथा फूट ककड़ी (*Cucumis melo* var. *momordica*), काचरी (*Cucumis melo* var. *callosus / agrestis*), ककड़ी, आर्या ककड़ी (*Cucumis melo* var. *utilissimus / acidulus / fluxuosus* / common), वेलारीक्की (vellarikkai), नोकाडोसाकई (nokadosakay) इत्यादि के वानस्पतिक लक्षणों में कई समानतायें हैं। खरबूजे के अलावा इन सभी प्रजातियों में प्रायः फूल उभयलिंगाश्रयी (monoecious) होते हैं एवं नर व मादा फूल एक ही पौधे की अलग–अलग गाँठों पर होने से पर–परागण होता है। उपरोक्त सभी प्रजातियों में आपसी पर–परागण क्रिया होने से कुकुमिस मेलो समूह में वृहद स्तर पर विविधतायें पायी गयी हैं एवं इस तरह आनुवंशिकीय मिलावटों से विविध उप–प्रजातियाँ जो कि विभिन्न लक्षणों युक्त विकसित हो जाती हैं तथा कई प्राकृतिक उप–प्रजातियों के फल बहुपयोगी एवं लगातार चयन प्रक्रिया से स्थिर हो जाने से नये स्थानीय प्रकार (new forms or local landraces) बन जाते हैं।

केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर में वर्ष 1994 से 2005 तक काचरी प्रजाति (non- dessertic forms of *Cucumis melo*) के जननद्रव्य सर्वेक्षण व संग्रहण एवं मूल्यांकन के अनुसंधान कार्य इस तरह किये गये जिससे कि इनके बहु–उपयोगी एवं अतिविशिष्ट लक्षणों वाले जननद्रव्यों का संरक्षण किया जा सके तथा पहली बार किये गये इस कार्य का मुख्य उद्देश्य इसकी उत्तम गुणवत्ता एवं उत्पादन क्षमता वाली किस्में विकसित कर व्यावसायिक खेती को बढ़ावा देना रखा गया। इसके लिए राजस्थान के मरूस्थलीय शुष्क व अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में सर्वेक्षण कार्य से काचरी प्रजातियों (कुकुमिस मेलो प्रजाति केलोसस / एग्रेटिस एवं कुकुमिस ट्राईगोनस / प्रोफेलेटम / हार्डविकी इत्यादि) के जननद्रव्यों का संग्रहण एवं फसल संबंधी आंकड़े एकत्रित किये गये तथा अधिकतम जैव–विविधता वाले जिलों जैसे – नागौर, बीकानेर, चुरू, जोधपुर, पाली, बाड़मेर, जैसलमेर इत्यादि में संस्थान एवं एनबीपीजीआर के साथ सघन सर्वेक्षण द्वारा लगभग 825 जननद्रव्यों का संग्रहण किया गया। इन संग्रहित जननद्रव्यों का बीकानेर की कृषि जलवायु में वर्ष 2005 तक बारम्बार मूल्यांकन किया गया तथा जैव–विविधता के अध्ययनों के आधार पर लगभग 600 जननद्रव्यों को बीज के रूप में राष्ट्रीय जीन बैंक, एनबीपीजीआर; नई दिल्ली में संरक्षित किया गया है। काचरी प्रजाति के संग्रहित जननद्रव्यों के प्रारंभिक मूल्यांकनों से इसके पौधों के वानस्पतिक एवं फलों के लक्षणों में सर्वाधिक जैव–विविधता पायी गई है। इस प्रजाति में पर–परागण एवं कुकुमिस मेलो की स्थानीय प्रजातियों में आपसी परागण क्रिया से नये–नये प्रकार बनते हैं तथा चयन प्रक्रिया में बने रहने से यह स्थानीय प्रकार जैव–विविधता को बढ़ाने में सहायक पाये गये हैं। यहाँ काचरी, फूट ककड़ी, आर्या ककड़ी, ककड़ी व खरबूजे में प्राकृतिक आपसी संयोजनों से नये प्रकार (local types or forms) पाये गये हैं एवं इनके फलों का आकार–प्रकार एवं स्वाद संबंधित संयोजनों के अनुरूप एवं समतुल्य होते हैं।

संस्थान में संग्रहित कुल काचरी जननद्रव्यों (825) के अध्ययनों एवं मूल्यांकनों से संकलित आंकड़ों से जैव–विविधता के लक्षणात्मक स्तर जिनमें फसल

dkpjh iztkfr esa okuLifrd y{k.kksa dk v/;;u

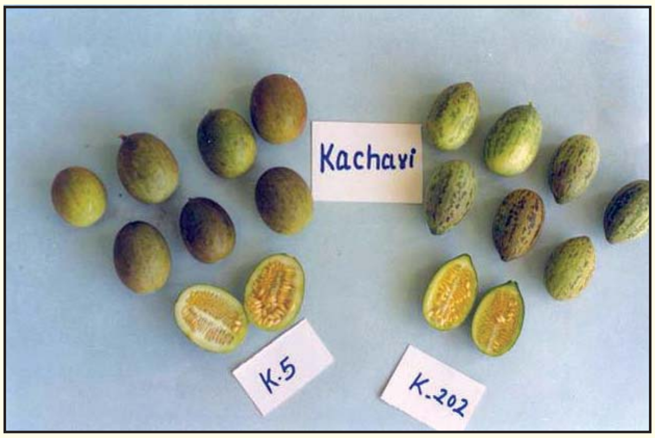

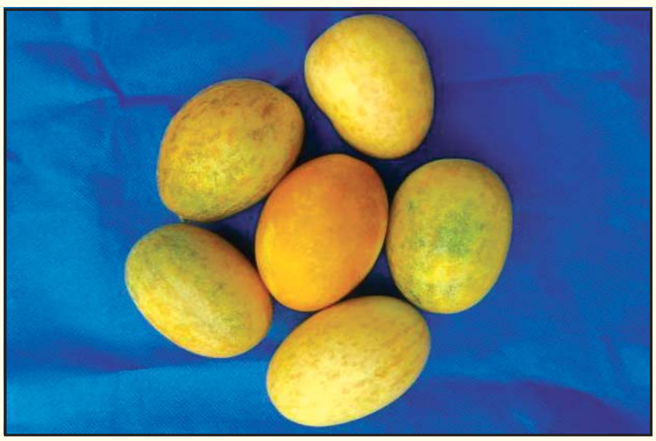

lLFkku }kjk lxfgr dkpjh tuun0;k esa fofo/krk dk v/;;u

सारणी–1: काचरी (कुकुमिस मेलो प्रजाति केलोसस/एग्रेटिस) जननद्रव्य सर्वेक्षण, संग्रहण, संरक्षण, आँकलन एवं किस्मों के विकास का विवरण, केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर।

क्र.सं.	जननद्रव्य संग्रहण के प्रकार, आँकलन एवं उपयोग (वर्ष 1994 से 2011)	आईसी संख्या का विवरण
1.	सीआईएएच द्वारा संग्रहित जननद्रव्य (510), 1994–2000	आईसी – 350887 से 351396
2.	एनबीपीजीआर द्वारा संग्रहित जननद्रव्य (26), 2000–2001	आईसी – 258157 से 258188
3.	एनबीपीजीआर द्वारा संग्रहित जननद्रव्य (33), 2000–2001	आईसी – 258113 से 258145
4.	एनबीपीजीआर द्वारा संग्रहित जननद्रव्य (18), 2002–2003	आईसी – 369801 से 376067
5.	संस्थान में संरक्षित (68) एवं प्रजनक संततियों (20), 2011 तक	संस्थान में संरक्षित अतिउपयोगी एवं विकसित प्रजनक प्रकार
6.	संस्थान में विकसित किस्में (02), 1998	एएचके – 119 – आईएनजीआर – 98013 एवं एएचके – 200 – आईएनजीआर – 98014

सारणी–2: काचरी जननद्रव्यों की संरक्षित संततियों (68) का मूल्यांकन से जैव–विविधता का अध्ययन।

लक्षण	स्तर		औसत	सीडी (5%)	सीवी (%)
	न्यूनतम	अधिकतम			
बुवाई बाद प्रथम नर फूलों के खिलने में लगे दिनों की संख्या	36.2	53.1	41.81	0.73	1.09
पौधे पर प्रथम नर फूलों के खिलने की गाँठ संख्या	1.6	4.2	2.77	0.53	11.94
बुवाई बाद प्रथम मादा फूलों के खिलने में लगे दिनों की संख्या	41.5	60.4	49.22	0.70	0.88
पौधे पर प्रथम मादा फूलों के खिलने की गाँठ संख्या	2.9	5.2	3.99	0.52	8.18
बुवाई बाद प्रथम फल तुड़ाई में लगे दिनों की संख्या	74.3	88.6	79.59	2.65	2.06
फल का वजन (ग्राम)	15.7	138.3	59.91	7.06	7.30
फल की लम्बाई (सेमी)	3.28	9.21	6.04	0.26	2.72
फल का व्यास (सेमी)	2.39	5.52	4.12	0.21	3.27
फलों की संख्या/पौधा	4.5	27.5	12.00	1.91	9.88
फल उपज/पौधा (किलोग्राम)	0.097	2.026	0.713	0.15	13.26
बीजों की लम्बाई (सेमी)	0.41	0.78	0.56	0.05	6.14
बीजों की चौड़ाई (सेमी)	0.17	0.38	0.26	0.04	10.06
बीजों का वजन/फल (ग्राम)	0.502	3.897	1.718	0.01	0.64
बीज उपज/पौधा (ग्राम)	3.291	52.993	20.416	3.22	9.77
100 बीजों का वजन (ग्राम)	0.507	1.559	0.895	0.02	1.75
बेलों की लम्बाई (मी)	1.65	3.35	2.12	0.22	5.85
शाखाओं की संख्या/पौधा	5.6	14.5	9.32	0.32	3.55

सारणी–3: काचरी जननद्रव्यों की संरक्षित संततियों (68) का मूल्याँकन से जैव–विविधता के घटकों का अध्ययन।

लक्षण	जीसीवी (%)	पीसीवी (%)	एच^2 % (ब्राडसेंस)	जेनेटिक एडवांस	जेनेटिक गेन (5% एसआई)
बुवाई बाद प्रथम नर फूलों के खिलने में लगे दिनों की संख्या	7.87	7.95	98.10	6.72	16.07
पौधे पर प्रथम नर फूलों के खिलने की गाँठ संख्या	10.67	16.02	44.41	0.40	14.65
बुवाई बाद प्रथम मादा फूलों के खिलने में लगे दिनों की संख्या	7.03	7.09	98.44	7.07	14.37
पौधे पर प्रथम मादा फूलों के खिलने की गाँठ संख्या	7.93	11.40	48.47	0.45	11.38
बुवाई बाद प्रथम फल तुड़ाई में लगे दिनों की संख्या	2.81	3.49	64.94	3.71	4.66
फल का वजन (ग्राम)	42.31	42.94	97.11	51.47	85.90
फल की लम्बाई (सेमी)	22.62	22.79	98.57	2.79	46.28
फल का व्यास (सेमी)	14.56	14.93	95.19	1.20	29.28
फलों की संख्या/पौधा	34.35	35.74	92.35	8.16	67.99
फल उपज/पौधा (किलोग्राम)	52.18	53.84	93.93	0.74	104.18
बीजों की लम्बाई (सेमी)	8.65	10.61	66.49	0.08	14.53
बीजों की चौड़ाई (सेमी)	9.61	13.92	47.72	0.03	13.68
बीजों का वजन/फल (ग्राम)	43.76	43.76	99.98	1.54	90.14
बीज उपज/पौधा (ग्राम)	50.12	51.07	96.34	20.69	101.35
100 बीजों का वजन (ग्राम)	20.53	20.60	99.27	0.37	42.14

सारणी–4: संस्थान में संरक्षित काचरी जननद्रव्यों (68) की प्रजातियों का विवरण, जिनका वर्ष 2011 में पुनः मूल्याँकन एवं बीज उत्पादन कर फसल सुधार कार्यक्रम के लिए सुरक्षित (-20° C deep freeze facilities) रखा गया है।

क्र.सं.	जननद्रव्य संख्या	आईसी संख्या	क्र.सं.	जननद्रव्य संख्या	आईसी संख्या
1	एएचके – 001	आईसी – 350887	35	एएचके – 327	आईसी – 351213
2	एएचके – 007	आईसी – 350893	36	एएचके – 342	आईसी – 351228
3	एएचके – 009	आईसी – 350895	37	एएचके – 356	आईसी – 351242
4	एएचके – 017	आईसी – 350903	38	एएचके – 368	आईसी – 351254
5	एएचके – 033	आईसी – 350919	39	एएचके – 372	आईसी – 351258
6	एएचके – 038	आईसी – 350924	40	एएचके – 384	आईसी – 351270
7	एएचके – 047	आईसी – 350933	41	एएचके – 396	आईसी – 351282
8	एएचके – 055	आईसी – 350941	42	एएचके – 401	आईसी – 351287
9	एएचके – 067	आईसी – 350953	43	एएचके – 411	आईसी – 351297
10	एएचके – 072	आईसी – 350958	44	एएचके – 417	आईसी – 351303
11	एएचके – 078	आईसी – 350964	45	एएचके – 482	आईसी – 351368
12	एएचके – 084	आईसी – 350970	46	एएचके – 488	आईसी – 351374
13	एएचके – 093	आईसी – 350979	47	एएचके – 496	आईसी – 351382
14	एएचके – 105	आईसी – 350991	48	एएचके – 503	आईसी – 351389
15	एएचके – 114	आईसी – 351000	49	एएचके – 514	आईसी – 258113
16	एएचके – 119	आईसी – 351005	50	एएचके – 517	आईसी – 258116
17	एएचके – 126	आईसी – 351012	51	एएचके – 526	आईसी – 258119
18	एएचके – 137	आईसी – 351023	52	एएचके – 538	आईसी – 258122
19	एएचके – 144	आईसी – 351030	53	एएचके – 542	आईसी – 258125
20	एएचके – 167	आईसी – 351053	54	एएचके – 555	आईसी – 258128
21	एएचके – 178	आईसी – 351064	55	एएचके – 564	आईसी – 258131
22	एएचके – 187	आईसी – 351073	56	एएचके – 572	आईसी – 258134
23	एएचके – 196	आईसी – 351082	57	एएचके – 588	आईसी – 258137
24	एएचके – 200	आईसी – 351086	58	एएचके – 594	आईसी – 258140
25	एएचके – 202	आईसी – 351088	59	एएचके – 601	आईसी – 258143
26	एएचके – 205	आईसी – 351091	60	एएचके – 612	आईसी – 369801
27	एएचके – 217	आईसी – 351103	61	एएचके – 615	आईसी – 369833
28	एएचके – 234	आईसी – 351120	62	एएचके – 621	आईसी – 370479
29	एएचके – 242	आईसी – 351128	63	एएचके – 632	आईसी – 373479
30	एएचके – 256	आईसी – 351142	64	एएचके – 641	आईसी – 373523
31	एएचके – 278	आईसी – 351164	65	एएचके – 654	आईसी – 373575
32	एएचके – 294	आईसी – 351180	66	एएचके – 701	डीकेएस 2011– 01
33	एएचके – 302	आईसी – 351188	67	एएचके – 702	डीकेएस 2011/02
34	एएचके – 316	आईसी – 351202	68	एएचके – 703	डीकेएस 2011/03

बुवाई पश्चात् पौधों में प्रथम नर फूल खिलने में लगे दिनों की संख्या (22.5–44.8), फसल बुवाई पश्चात् पौधों में प्रथम मादा फूल खिलने में लगे दिनों की संख्या (28.2–48.7), फसल बुवाई पश्चात् पौधों में पहली फल तुड़ाई में लगे दिनों की संख्या (54.5–80.0), फलों की संख्या/पौधा (4.0–102.4), फल का वजन (10.2–220.5 ग्राम), फल की लम्बाई (2.30–12.01 सेमी), फल का व्यास (2.21–6.50 सेमी), फलों के गूदे की मोटाई (0.11–1.64 सेमी), शाखाओं की संख्या/पौधा (3.0–14.5), बेलों की लम्बाई (0.92–2.55 मीटर) तथा फल उपज/पौधा (0.155–3.25 किलोग्राम) पाये गये हैं। इसी प्रकार मूल्यांकन से फलों के आकार–प्रकार (अंडाकार, गोल, चपटे गोल, दीर्घयाताकार, लंबे व नुकीले लंबे/अत्यधिक छोटे से बड़े), छिलकों का रंग (हल्के हरे से गहरे हरे, हल्के पीले, पीले से गहरे केसरिया या सफेद तथा छिलकों पर स्पष्ट व खंडित धारियाँ या बिना धारीदार, अस्पष्ट जालीनुमा धारियाँ), खाने योग्य गूदे का रंग (सफेद से हल्का पीला, दूधिया पीला से हल्का केसरिया) एवं स्वाद (अत्यधिक खट्टे, खट्टे–मीठे व विशेष गंधयुक्त) तथा बीजों की मात्रा जैसे प्रमुख लक्षणों में अत्यधिक विविधता पायी गई है। जननद्रव्यों के मूल्यांकन व लक्षणों के विश्लेषणात्मक अध्ययनों से यह पाया गया कि इसमें मुख्यतः दो प्रकार के फल वाली प्रजातियाँ जिनको काचरी एवं मट–काचरी के नाम से विभक्त किया जा सकता है। जननद्रव्यों के अध्ययनों में यह पाया गया कि इनके पौधे अत्यधिक सूखा एवं प्रतिकूल गर्म जलवायु को सहन करने की क्षमता रखते हैं तथा अल्पवर्षा एवं कम फसल समयावधि में अच्छी फलन व उत्पादन के योग्य हैं। इसी प्रकार कई जननद्रव्यों के पौधों व फलों में प्रमुख कीड़ों (फल मक्खी) एवं बीमारियों (पाउडरी मिल्डयू, सीजीएमएमवी, विल्ट) से प्रतिरोधक क्षमता पायी गई है। संस्थान में काचरी प्रजाति के जननद्रव्यों पर विस्तृत अध्ययन एवं बारम्बार मूल्यांकन द्वारा प्रमुख लक्षणों के आधार पर इनके समूह बनाये गये तथा अतिविशिष्ट लक्षणों व बहु–उपयोगी जननद्रव्यों (68) को फसल सुधार कार्यक्रम एवं संरक्षण के लिए चयनित किया गया है।

जननद्रव्यों के लक्षणात्मक एवं उपयोगिता के आधार पर चयन प्रक्रिया पश्चात् शुद्धिकरण से वर्ष 2005 तक काचरी की 68 प्रजनक लाइनों को फसल सुधार कार्यक्रम एवं संरक्षण के लिए -20^0 सेल्सियस तापमान वाले शीत (deep freeze) एवं सामान्य अवस्थाओं में भंडारित रखा गया। संस्थान में भंडारित इन जननद्रव्यों को 2011 में पुनः अनुसंधान अध्ययनों विशेषकर बीजों को सुरक्षित रखने की विधियाँ, जैव–विविधता के लक्षणात्मक आँकलन एवं बीज उत्पादन के लिए उपयोग लिया गया। बीजों पर भंडारण अनुसंधान कार्यों से यह पाया गया कि इनको 5–6 वर्ष सामान्य एवं 10–12 वर्ष शीत भंडारण अवस्था से सुरक्षित रखा जा सकता है तथा बीजों में अंकुरण, पौधों में वानस्पतिक वृद्धि एवं उत्पादन क्षमता ताजा एवं भंडारण बीजों के समतुल्य रही है। पूर्णतया वर्षा आधारित फसल से 68 जननद्रव्यों पर जैव–विविधता के लक्षणात्मक अध्ययनों के स्तर में सर्वाधिक विभिन्नतायें जिनमें फसल बुवाई पश्चात् पौधों में प्रथम नर फूल खिलने में लगे दिनों की संख्या (36.2– 53.1), पौधे पर प्रथम नर फूलों के खिलने की गाँठ संख्या (1.6–4.2), फसल बुवाई पश्चात् पौधों में प्रथम मादा फूल खिलने में लगे दिनों की संख्या (41.5–60.4), पौधे पर प्रथम मादा फूलों के खिलने की गाँठ संख्या (2.9–5.2), फसल बुवाई पश्चात् पौधों में पहली फल तुड़ाई में लगे दिनों की संख्या (74.3–88.6), फल का वजन (15.7–138.3 ग्राम), फल की लम्बाई (3.28–9.21 सेमी), फल का व्यास (2.39–5.52 सेमी), फलों की संख्या/पौधा (4.5–27.5), फल उपज/पौधा (0.097–2.026 किलोग्राम), बीजों की लम्बाई (0.41–0.78 सेमी), बीजों की चौड़ाई (0.17–0.38 सेमी), बीजों का वजन/फल (0.502–3.897 ग्राम), बीज उपज/पौधा (3.291–52.993 ग्राम), 100 बीजों का वजन (0.507–1.

559 ग्राम), बेलों की लम्बाई (1.65–3.35 मीटर) एवं शाखाओं की संख्या/पौधा (5.6–14.5) पायी गई हैं।

इसी प्रकार प्रजनक लाइनों के अध्ययनों में फलों के आकार–प्रकार (अंडाकार, गोल, चपटे गोल, दीर्घयाताकार, लंबे व नुकीले लंबे/अत्यधिक छोटे से बड़े) तथा छिलके (पतले से मोटे) का रंग (हल्के हरे से गहरे हरे, हल्के पीले, पीले से गहरे केसरिया या सफेद) जिन पर स्पष्ट व खंडित धारियाँ या बिना धारीदार, अस्पष्ट जालीनुमा धारियों जैसी विविधताओं वाले हैं। जननद्रव्यों में सूखा सहन करने की क्षमता के अध्ययनों के लिए पूर्णतयाः वर्षा आधारित फसल से पौधों में वानस्पतिक वृद्धि एवं फल उत्पादन के अनुरूप वर्गीकृत किया गया है तथा इनमें प्रमुख बीमारियों एवं फल मक्खी के आक्रमण संबंधी आंकलन से इनके भी समूह बनाये गये हैं। संस्थान में सतत् जननद्रव्य मूल्यांकन एवं चयन प्रक्रिया पश्चात् शुद्धिकरण तथा बारम्बार आँकलन के परिणामस्वरूप फसल के लिए पौधों में वानस्पतिक व फलों के आकार–प्रकार, गुणवत्ता एवं उत्पादकता तथा सूखा सहन करने की क्षमता जैसे महत्वपूर्ण लक्षणों के आधार पर अतिविशिष्ट एवं बहु–उपयोगी प्रजनक लाइनों का चयन कर सुधार कार्यक्रम के उपयोग में लिया गया है।

mUur fdLek dk fodkl

मरूस्थलीय जलवायु की विषमपरिस्थितियों एवं अल्पवर्षा में काचरी की उत्पादक क्षमता, बाजार में लगातार ताजा व सूखे फलों की माँग तथा स्थानीय स्तर पर उपलब्ध संसाधनों से वर्ष में दो बार यथा ग्रीष्म व वर्षाकालीन व्यवस्थित खेती से इसके फलों की उपलब्धता अप्रैल से दिसम्बर महीने तक बनाये रखने जैसे महत्वपूर्ण पहलुओं को ध्यान में रखकर इसकी व्यावसायिक खेती के लिए उन्नत किस्में विकसित करने की आवश्यकता थी। सर्वप्रथम इसके लिए केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर में वर्ष 1994 से जननद्रव्य संग्रहण, संरक्षण एवं फसल सुधार के अनुसंधान कार्य प्रारंभ किये गये। बारम्बार मूल्यांकनों से चयनित जननद्रव्यों के शुद्धिकरण पश्चात् अतिविशिष्ट गुणों तथा बहु–उपयोगिता यथा पौधों में वानस्पतिक वृद्धि, फलों के आकार–प्रकार व गुणवत्ता, सूखा सहन करने की क्षमता एवं उत्पादकता के आधार पर सर्वाधिक उपयुक्त प्रजनक लाइनों जैसे – एएचके–119, एएचके–200, एएचके–202, एएचके–109, एएचके–155, एएचके–5, एएचके–411, एएचके–564 एवं एएचके–572 का चयन किस्में विकसित करने के लिए किया गया तथा इनको खेती की विभिन्न उत्पादन व्यवस्थाओं में वृहद स्तर पर जाँचा गया। इनमें से अतिमहत्वपूर्ण लक्षणों एवं सर्वाधिक उपयुक्त उन्नत किस्मों यथा **, ,pd&119** एवं **, ,pd&200** को चयनित कर व्यावसायिक खेती के लिए वर्ष 1998 में संस्तुति की गई है। संस्थान द्वारा विकसित काचरी की उन्नत किस्मों एवं फसल उत्पादन तकनीकियों को अपनाकर किसान इसकी एकल खेती में विशेष रूचि ले रहे हैं तथा वर्ष 2002 से इन किस्मों के बीजों की सहजता से उपलब्धता एवं व्यापक प्रचार–प्रसार से देश के शुष्क व अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में वृहद स्तर पर इनका उत्पादन करने लगे हैं।

, ,pd&119

संस्थान द्वारा वर्ष 1998 में विकसित यह किस्म सब्जी, चटनी, अचार एवं सुखाने के लिए सर्वाधिक उपयुक्त है। पूर्ण विकसित फल आकार में छोटे तथा अण्डाकार जिनका छिलका कठोर एवं हल्के हरे रंग वाला जो कि गहरी व खंडित धारियों युक्त होते हैं। सामान्यतः फलों का वजन 50–60 ग्राम जिनकी लम्बाई 5.0–6.0 सेमी एवं व्यास 4.0–4.5 सेमी होता है। फल के खाने योग्य गूदे की मोटाई 0.4 सेमी एवं बीज वाले भाग की चौड़ाई 3.04 सेमी होती है तथा यह स्वाद में खट्टे–मीठे, रसीले एवं अधिक बीज युक्त होते हैं। फलों का छिलका कठोर होने से यह

lLFkku }kjk p;fur ,o fodflr dkpjh itkfr d cg&mi;kxh tuunO;k d Qyk e fofo/krk;

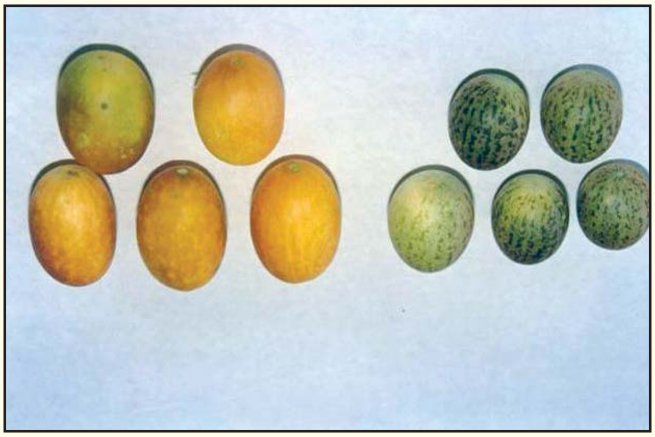

lLFkku }kjk fodflr dkpjh fdLe ,,pd&119

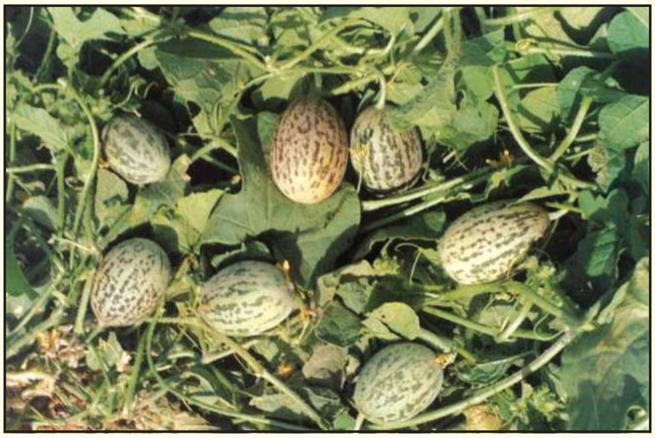

lLFkku }kjk fodflr dkpjh fdLe ,,pd&200

सारणी–5: शुष्क क्षेत्रीय जलवायु में काचरी किस्म एएचके–119 के वृहद स्तर पर आँकलन से तुलनात्मक लक्षण (वर्ष 1996 व 1997)।

लक्षण	वर्ष 1996		वर्ष 1997	
	ग्रीष्मकालीन	वर्षाकालीन	ग्रीष्मकालीन	वर्षाकालीन
बुवाई बाद प्रथम मादा फूलों के खिलने में लगे दिनों की संख्या	39.5	38.4	37.2	37.5
बुवाई बाद प्रथम फल तुड़ाई में लगे दिनों की संख्या	70.2	69.4	69.4	68.3
फलों की संख्या/पौधा	21.4	22.3	21.8	23.2
फल का वजन (ग्राम)	55.8	60.4	60.4	60.5
फल की लम्बाई (सेमी)	5.52	5.52	5.54	5.54
फल का व्यास (सेमी)	4.31	4.32	4.32	4.31
फल के गूदे वाला भाग (सेमी)	0.40	0.42	0.43	0.43
फल के बीज वाला भाग (सेमी)	3.02	3.05	3.04	3.04
फल उपज/हैक्टेयर (क्विं.)	90.5	99.5	100.2	99.2
बेलों की लम्बाई (मी)	2.4	2.5	2.4	2.5
शाखाओं की संख्या/पौधा	6.7	6.4	6.4	6.5

सारणी–6: किस्मगत आँकलन से काचरी एएचके–119 के प्रमुख लक्षण (वर्ष 1997 व 1998 का औसत)।

लक्षण	एएचके – 119
बुवाई बाद प्रथम तुड़ाई में लगे दिनों की संख्या	68 – 70
फलों की संख्या/पौधा	21 – 23
फल का वजन (ग्राम)	60.5
फल उपज/हैक्टेयर (क्विं.)	99.5
फल की लम्बाई (सेमी)	5.54
फल का व्यास (सेमी)	4.32
फल के बीज वाला भाग (सेमी)	3.04
फल के गूदे वाला भाग (सेमी)	0.43

सारणी–7: शुष्क क्षेत्रीय जलवायु में काचरी किस्म एएचके–200 के वृहद स्तर पर आँकलन से तुलनात्मक लक्षण (वर्ष 1996 व 1997)।

लक्षण	वर्ष 1996		वर्ष 1997	
	ग्रीष्मकालीन	वर्षाकालीन	ग्रीष्मकालीन	वर्षाकालीन
बुवाई बाद प्रथम मादा फूलों के खिलने में लगे दिनों की संख्या	32.4	31.4	32.0	31.4
बुवाई बाद प्रथम तुड़ाई में लगे दिनों की संख्या	65.4	65.3	64.2	63.8
फलों की संख्या/पौधा	19.8	20.2	21.4	21.2
फल का वजन (ग्राम)	110	115	119	120
फल की लम्बाई (सेमी)	8.12	8.14	8.11	8.12
फल का व्यास (सेमी)	5.18	5.12	5.17	5.10
फल के गूदे वाला भाग (सेमी)	1.02	1.01	1.00	1.01
फल के बीज वाला भाग (सेमी)	3.52	3.51	3.50	3.51
फल उपज/हैक्टेयर (क्विं.)	105.3	108.4	112.5	115.5
बेलों की लम्बाई (मी)	1.70	1.71	1.70	1.72
शाखाओं की संख्या/पौधा	5.2	5.2	5.4	5.2

सारणी–8: किस्मगत आँकलन से काचरी एएचके–200 के प्रमुख लक्षण (वर्ष 1997 व 1998 का औसत)।

लक्षण	एएचके – 200
बुवाई बाद प्रथम तुड़ाई में लगे दिनों की संख्या	60 – 62
फलों की संख्या/पौधा	19 – 21
फल का वजन (ग्राम)	120.4
फल उपज/हैक्टेयर (क्विं.)	112.2
फल की लम्बाई (सेमी)	8.12
फल का व्यास (सेमी)	5.14
फल के बीज वाला भाग (सेमी)	3.52
फल के गूदे वाला भाग (सेमी)	1.01

सारणी–9: संस्थान द्वारा विकसित काचरी किस्मों की शुष्क क्षेत्रीय जलवायु में उत्पादन क्षमता (क्विंटल/है.)।

किस्म/वर्ष	1996	1997	1998	1999	2000	2001	औसत
एएचके–119	94	99	96	96	95	95	95
एएचके–200	106	113	109	109	100	112	109

सारणी–10: ग्रीष्मकालीन काचरी की फसल बुवाई के समय का उत्पादन पर प्रभाव (किस्म एएचके–119 के तीन वर्षों के आँकलन का औसत)

बुवाई का समय	बुवाई के बाद फलों की पहली तुड़ाई में लगे दिनों की संख्या	फलों कीसंख्या/पौधा	फल उपज (किलोग्राम/पौधा)
15 फरवरी	82.5	24.8	1.785
25 फरवरी	75.5	21.5	1.575
05 मार्च	70.2	19.6	1.332
15 मार्च	65.8	18.2	1.183
औसत	73.5	21.0	1.468

सारणी–11: नाली तकनीकी में काचरी फसल बुवाई की दूरी के विभिन्न स्तरों का उत्पादन पर प्रभाव (किस्म एएचके–119 की ग्रीष्म एवं वर्षाकालीन फसलों का औसत)।

फसल बुवाई के लिए तैयार नालियों की चौड़ाई + दो नालियों के बीच की जगह जहाँ बेलों को फैलाया जाता है × नालियों में पौधे से पौधे की दूरी (मीटर) के लिए बीज बुवाई का स्थान	फल उत्पादन (क्विं/है.)
0.60 + 1.40 × 0.50	96.8
0.60 + 1.40 × 0.75	92.2
0.60 + 1.40 × 1.00	89.3
0.60 + 1.90 × 0.50	86.5
0.60 + 1.90 × 0.75	81.2
0.60 + 1.90 × 1.00	75.5
औसत	86.9

अधिक दिनों तक भंडारित किये जा सकते हैं। कम समयावधि में पकने वाली किस्म होने से बुवाई पश्चात् पौधों में नर फूल 27–28 दिनों एवं मादा फूल 38–40 दिनों से खिलना प्रारंभ हो जाते हैं। बुवाई पश्चात् पौधों से पहली फल तुड़ाई 68–70 दिनों में प्रारंभ हो जाती है एवं यह 110–120 दिनों तक रहती है। मध्यम लंबाई वाले पौधों (1.7–2.5 मीटर) पर 5–7 मुख्य शाखाऐं एवं उन पर कई उपशाखाऐं होती हैं। सामान्यतः व्यवस्थित खेती में एक पौधे पर 20–23 फल सहजता से लगते हैं जिससे 95 – 100 क्विंटल/हैक्टेयर उत्पादन होता है। अत्यधिक तापमान एवं सूखा सहन करने की क्षमता तथा अल्पवर्षा में अधिक उत्पादकता के कारण इस किस्म को ग्रीष्म एवं वर्षाकालीन फसल के लिए क्रमशः फरवरी – मार्च एवं जून – जुलाई महीने में बुवाई की जा सकती है।

एएचके–200

संस्थान द्वारा वर्ष 1998 में विकसित यह किस्म सब्जी एवं फल–सलाद के लिए सर्वाधिक उपयुक्त है। पूर्ण विकसित फल मध्यम–बड़े एवं दीर्घायताकार होते हैं तथा पके फलों का छिलका मध्यम कठोर एवं हल्का पीला–केसरिया रंग वाला होता है। फलों का वजन 100–120 ग्राम एवं जिनकी लम्बाई 7.0–8.0 सेमी तथा व्यास 5.0–5.2 सेमी होता है। फलों के खाने योग्य गूदे की मोटाई 1.0 सेमी एवं कम बीज युक्त बीच वाले भाग की चौड़ाई 2.5 सेमी होती है तथा विशेष खट्टे–मीठे स्वाद वाला गूदा मीठा, रसीला व स्वादिष्ट होता है। कम समयावधि में पकने वाली किस्म होने से बुवाई पश्चात् पौधों में नर फूल 25–27 दिनों एवं मादा फूल 32–33 दिनों से खिलना प्रारंभ हो जाते हैं। बुवाई पश्चात् पौधों से पहली फल तुड़ाई 65–70 दिनों में प्रारंभ हो जाती है एवं यह 100–110 दिनों तक रहती है। मध्यम लंबाई वाले पौधों (1.75–2.25 मीटर) पर 5–6 मुख्य शाखाऐं एवं उन पर कई उपशाखाऐं होती हैं। सामान्यतः व्यवस्थित खेती में एक पौधे पर 18–20 फल सहजता से लगते हैं जिससे 115 – 120 क्विंटल/हैक्टेयर उत्पादन होता है। अत्यधिक तापमान एवं सूखा सहन करने की क्षमता तथा अल्पवर्षा में अधिक उत्पादकता के कारण इस किस्म को ग्रीष्म एवं वर्षाकालीन फसल के लिए क्रमशः फरवरी – मार्च एवं जून – जुलाई महीने में बुवाई की जा सकती है।

मरूस्थलीय जलवायु

राजस्थान के उत्तर–पश्चिमी गर्म मरूस्थलीय जलवायु वाले क्षेत्र में मानसून की वर्षा में अनिश्चितता तथा मात्रा एवं वितरण में असमानताऐं से परम्परागत कृषि में स्थानीय खरीफ फसलों का उत्पादन किया जाता है। वातावरणीय रूकावटों के प्रकोप तथा अत्यधिक कम वर्षा (150–350 मिलीमीटर) के कारण यहाँ की परम्परागत खेती के 4–5 फसल वर्षों में से मात्र एक बार ही भरपूर पैदावार मिल पाती है जब कि शेष वर्षों में वर्षा के वितरण दिनों में अधिक अंतराल एवं सूखे (drought) की स्थिति से 60–80 प्रतिशत फसलें प्रभावित हो जाती हैं। सामान्यतः यहाँ वर्षा 9–21 दिन (rainy days) जिसका वितरण मध्य जून से सितम्बर महीने के अंत तक रहता है परन्तु अधिकतम वर्षा की मात्रा 1–3 समूहों (rain spells) में ही हो जाती है। इस तरह मात्रा, वितरण एवं समय अन्तराल में अनिश्चितता तथा अस्थिरता से वर्षा आधारित फसलों की उत्पादन व्यवस्थाऐं प्रभावित होती हैं। यहाँ सर्दियों में होने वाली वर्षा (मावठ) भी अनिश्चितता के साथ नवबंर से फरवरी महीनों के मध्य होने से इसका लाभ खरीफ फसलों को नहीं मिल पाता है। इस क्षेत्र में सिंचाई के संसाधन सीमित हैं एवं भूमिगत जलस्तर गहरा (350–1000 फीट) तथा इसकी अधिकांश गुणवत्ता कृषि योग्य नहीं है।

यहाँ लम्बी समयावधि वाला अधिक तापमान (40–48^0 सेल्सियस मार्च–जून एवं 35–40^0 सेल्सियस

जुलाई–अक्टूबर तक) एवं प्रचण्ड धूप होने से गर्म जलवायु की स्थितियाँ मार्च–अक्टूबर महीने तक बनी रहती हैं। सूर्य का तेज प्रकाश, अधिक तापमान एवं आर्द्रता की कमी जैसी वातावरणीय परिस्थितियों से पौधों तथा भूमि की सतह से जल का वाष्पीकरण (evapo-transpiration) अधिक होता है जिससे फसलों में सिंचाई की अधिक आवश्यकता होती है तथा प्रारम्भिक वानस्पतिक वृद्धि एवं फूल व फल जमाव को भी प्रभावित करती है। अत्यधिक गर्म तापमान वाले मई–जून में यहाँ धूल–सरित आंधियों व गर्म हवाओं (लू) का प्रकोप रहता है। तेज हवाओं के साथ रेत के गर्म कण पौधों एवं नवविकसित शाखाओं, कलियों, फूलों तथा फलों को झुलसा देते हैं जिससे फसलों की वानस्पतिक वृद्धि एवं उत्पादकता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। गर्म मरूस्थलीय क्षेत्र में लंबी समयावधि वाली सर्दी ऋतु मध्य नवंबर से प्रारंभ होकर मध्य मार्च महीने तक रहती है। यहाँ दिसम्बर–जनवरी में न्यूनतम तापमान शून्य से कम, शीत–लहर एवं पाले की स्थितियाँ अनिश्चितताओं के साथ फसलों को प्रभावित करती हैं। ठण्ड की सर्वाधिक तीव्रता दिसम्बर के अंतिम सप्ताह से मध्य जनवरी तक होती है एवं कई बार न्यूनतम तापमान -4^0 सेल्सियस तक हो जाता है तथा इसी समयावधि में दिन की साफ धूप एवं वातावरण में शुष्कता से पाले (frost) के प्रकोप की संभावनाऐं बढ़ जाती हैं।

यहाँ खेती योग्य जमीन रेतीले टिब्बों वाली व उबड़–खाबड़ (desertic and sand dunes land scape) होती है तथा भूमि को समतल करने पर गर्मी के दिनों में आंधियाँ चलने से यह मिट्टी उड़ती है। इसी तरह धूल भरी आंधियों से समतल खेतों की उपजाऊ मिट्टी भी एक स्थान से उड़कर दूसरे स्थान पर जमा हो जाने से खेतों की उर्वरा शक्ति प्रभावित होती है। इस क्षेत्र की रेतीली मिट्टी (sandy soil) में उर्वरा शक्ति एवं पोषक तत्वों की अत्यधिक कमी तथा जल भंडारण की क्षमता भी कम होती है।

मरूस्थलीय जलवायु वाले शुष्क एवं अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में काचरी की वर्षा एवं ग्रीष्मकालीन फसल से सफलतापूर्वक उत्पादन किया जा सकता है। काचरी के पौधे सूखा सहिष्णु एवं अधिक तापमान सहन करने वाले होते हैं इसीलिए सीमित वर्षा (250–300 मिलिलीटर) एवं सिंचाई में भी इनमें वानस्पतिक वृद्धि एवं फल उपज अच्छी होती है। अधिक एवं लगातार वर्षा वाली जलवायु के क्षेत्र इसके उत्पादन के लिए उपयुक्त नहीं हैं। काचरी के पौधे सर्दियों में अत्यधिक ठण्ड, शून्य से नीचे तापमान एवं पाले की स्थिति में पूर्णतया नष्ट हो जाते हैं। फसल बुवाई के समय बीजों में शीघ्रता एवं अधिकतम अंकुरण के लिए 20^0–22^0 सेल्सियस तापमान तथा पौधों में वानस्पतिक वृद्धि एवं फल जमाव के लिए 32^0–38^0 सेल्सियस तापमान सर्वाधिक उपयुक्त है, परंतु मरूस्थलीय जलवायु में जहाँ अधिकतम तापमान 48^0 सेल्सियस तक रहता है वहाँ भी इसकी सफलतापूर्वक खेती की जा सकती है। काचरी की व्यवस्थित एवं लाभप्रद खेती के लिए अच्छे जल निकास वाली मरूस्थलीय रेतीली, बलुई या बलुई दोमट मिट्टी तथा पी. एच. मान 6.5 – 8.5 वाली सर्वाधिक उपयुक्त है। रेतीली या टिब्बों वाले खेतों में फसल में फल कम समयावधि में तुड़ाई पर आ जाते हैं।

Ql y Á{k= Ácl/ku rduhd

देश के उत्तर–पश्चिमी गर्म शुष्क क्षेत्र की परम्परागत खेती में ग्वार, मोठ, बाजरा, काचरी, काकड़िया, मतीरा व टिण्डा के साथ स्थानीय पेड़–पौधों (खेजड़ी, झरबेर, बोरड़ी, कैर, कुमट, रोहिड़ा, लसोड़ा, फोग आदि) एवं घासों (सेवण, धामण, भरुट आदि) का मिश्रित उत्पादन किया जाता है। कृषि में व्यावसायिक जागरूकता, फल–सब्जी व नगदी फसलों की बढ़ती माँग के साथ बाजार में उचित भाव तथा सीमित सिंचाई जल की उपलब्धता होने से यहाँ के किसान परम्परागत एवं अप्रचलित फसलों की खेती

पर ध्यान देने लगे हैं। परंतु वर्षा आधारित (बारानी) या सिंचाई द्वारा सब्जी उत्पादन से किसान पूरा लाभ नहीं ले पा रहे हैं जिसका मुख्य कारण उन्नत किस्मों के बीजों का अभाव तथा खेती में वैज्ञानिक तकनीकों का समावेश नहीं करना है। मरुस्थलीय जलवायु बागवानी के लिए प्रतिकूल होने से यहाँ फसलों के चयन में न केवल कठिनाई होती है, साथ ही उत्पाद की गुणवत्ता एवं उत्पादकता को भी प्रभावित करती है अतः उपयुक्त उन्नत किस्मों एवं तकनीकों के साथ सुनियोजित उत्पादन योजनाओं की आवश्यकता होती है। शुष्क जलवायु में सब्जी उत्पादन की व्यापक संभावनायें हैं लेकिन वातावरणीय रूकावटों के कारक, वर्षा की मात्रा एवं वितरण तथा सिंचाई जल की उपलब्धता इसे प्रभावित कर रही है। बीकानेर में किये गये सतत् अनुसंधान कार्यों के निष्कर्षों के आधार पर इस जलवायु में लगभग 55 तरह के पेड़–पौधों से सब्जी उत्पादन किया जा सकता है जिनमें से 35 फसलों को व्यावसायिक खेती के लिए बढ़ावा दिया जा रहा है। यहाँ व्यावसायिक सब्जी उत्पादन के लिए जलवायु व संसाधनों के अनुरुप उन्नत किस्मों एवं इनके बीजों का अभाव है तथा फसलों के चयन में भी कठिनाइयाँ आती हैं। संस्थान में सब्जी सुधार कार्यक्रम के अंतर्गत प्रमुख फसलों तथा अल्पप्रचलित एवं बहु–उपयोगी पेड़–पौधों के स्थानीय जननद्रव्यों को शुद्धिकरण से उन्नत प्रजातियाँ विकसित की हैं तथा इनके उत्पादन एवं उपयोगिता के लिए किसानों को जागरूक किया जा रहा है।

केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर में विगत 20 वर्षों (1994–2014) से क्षेत्रीय जलवायु को आधार बनाकर किए गये अनुसंधान अध्ययनों से कृषि–बागवानी की रूकावटों एवं संभावनाओं, प्रतिकूल जलवायु में बागवानी फसलों की व्यावसायिकता व इनकी गुणवत्ता युक्त उत्पादन क्षमता तलाशने तथा संसाधनों का समुचित उपयोग जैसे महत्वपूर्ण घटकों का विस्तारपूर्वक विश्लेषण कर निष्कर्ष निकाले गये हैं। अत्यधिक कम वर्षा, लम्बी समयावधि एवं अधिक तापमान वाला ग्रीष्मकाल तथा सर्दियों में अत्यधिक न्यूनतम तापमान एवं पाले की स्थिति जैसी वातावरणीय रूकावटों में भी सुनियोजित फसलों का चुनाव, उनकी समयावधि को क्षेत्रीय जलवायु के अनुरूप उत्पादन प्रणालियों में समावेश तथा प्रबंधन कर व्यावसायिकता की प्रबल संभावनाऐं आँकी गई हैं। इसके अंतर्गत फसलों को वातावरणीय प्रकोप के प्रभाव से बचाने एवं निश्चित उत्पादन के लिए प्रक्षेत्र में उचित कृषि–वातावरण तैयार करना एक सैद्धांतिक आवश्यकता मानी है। इस क्षेत्र में बागवानी के लिए विशेष फसल सुरक्षा एवं प्रबंधन की आवश्यकता है जो प्रभावशाली, स्थिर एवं वैज्ञानिकता से परिपूर्ण हो, जिससे किसान उन्हें सहजता से अपना सके। इसी के साथ फसलों में अच्छी वानस्पतिक वृद्धि एवं गुणवत्ता युक्त उत्पादन के लिए उन्नत व नवोन्वेषित तकनीकों को प्रक्षेत्र प्रबन्धन व्यवस्थाओं में अपनाना होता है। इसके लिए मेरे द्वारा किये गये अनुसंधान कार्यों के आधार पर एक सुनियोजित योजना का सृजन किया गया है जिसको बागवानी आधारित फसल उत्पादन प्रक्षेत्र प्रबन्धन (Horticulture based crop production site management approach, HBCPSMA) नाम दिया है। अध्ययनों के आधार पर बागवानी में सब्जी के लिए खेजड़ी आधारित उत्पादन एवं प्रक्षेत्र प्रबंधन के योजनागत प्रारूप तैयार किये हैं तथा व्यवस्थाऐं विकसित करने के लिए निम्नलिखित सैद्धांतिक बिन्दुओं का समावेश आवश्यक है :–

1) बागवानी में खेजड़ी आधारित फसल उत्पादन के लिए प्रक्षेत्र का चुनाव तथा प्रक्षेत्र/खेत के चारों ओर स्थानीय प्रजातियों के बहुपयोगी पेड़–पौधों व झाड़ियों का समावेश कर वायुरोधी पट्टिकाओं का सुनियोजित ढंग से विकास करना जिससे खेत में आवश्यक एवं अनुकूल कृषि–वातावरण तैयार किया जा सके। इस योजना में बाड़ी या तार बंदी प्रक्षेत्र प्रबंधन का प्रथम सैद्धांतिक एवं अनिवार्य आधार है।

2) संसाधनों के अनुरूप प्रक्षेत्र में खेजड़ी आधारित फसल उत्पादन प्रणालियाँ विकसित करना तथा खेती के लिए उपयुक्त व चयनित उत्पादन प्रणालियों में सब्जी फसलों की उन्नत किस्मों का उपयोग करना।

3) प्रक्षेत्र प्रबंधन तकनीकी में सार्थक सब्जी फसल उत्पादन एवं संसाधनों के समुचित उपयोग के लिए उन्नत व नवोन्वेषित तकनीकें जैसे खेत की समय पर तैयारियाँ, वर्षा जल संग्रहण, नमी संरक्षण तथा सिंचाई तरीकों पर विशेष व्यवस्थायें, संतुलित खाद व उर्वरकों का उपयोग, मृदा–उर्वरा संरक्षण व स्वास्थ्य हेतु उपयुक्त कृषि क्रियाऐं तथा पलवार के लिए स्थानीय घास–फूस को प्राथमिकता से अपनाना।

4) फसल उत्पादन में समय पर विधिवत बुवाई, पौध संख्या निर्धारण, निराई–गुड़ाई व अन्तर–शस्य क्रियायें तथा उत्पाद प्रबन्धन को वैज्ञानिक ढंग से अपनाना, तथा

5) प्रतिकूल जलवायु के कारकों, जंगली जानवरों, पक्षियों तथा कीड़ों व बीमारियों से बचाव हेतु समेकित सब्जी फसल सुरक्षा प्रबन्धन को अपनाना।

ç{k= fodkl rduhd

संस्थान द्वारा विकसित बागवानी की इस योजना में खेजड़ी आधारित प्रक्षेत्र विकास एवं प्रबन्धन व्यवस्थायें की जाती हैं तथा उन्नत एवं नवोन्वेषित तकनीकियाँ अपनाकर फल, सब्जी व नगदी फसलों की सफलतापूर्वक खेती की जा सकती है। प्रक्षेत्र विकास की इस योजना से वातावरणीय रूकावटों के प्रभावों को कुछ सीमा तक कम किया जा सकता है तथा कृषि योग्य वातावरण बनने से फसलों की उत्पादकता एवं गुणवत्ता में आवश्यक सुधार संभव हैं। किसान, संस्थान द्वारा विकसित खेजड़ी आधारित इस तकनीकी में संसाधनों के अनुरूप परम्परागत अथवा गैर–परम्परागत फसलों का समावेश व्यवस्थित प्रणालियों में कर सुनिश्चित उत्पादन कर सकते हैं। इस व्यवस्था को विकसित करने के लिए उनको प्रारम्भ के 2–3 वर्षों तक कड़ी मेहनत करनी होती है जिसका प्रतिफल सुनिश्चित लाभ एवं निरन्तर आय है। जिनके पास 4–16 या 25 बीघा जमीन का एकल जोत है वे खेजड़ी आधारित सब्जी उत्पादन व्यवस्थायें विकसित कर सकते हैं। सर्वप्रथम चयनित भू–भाग की बाड़ या तार बंदी करना आवश्यक है जो कि इस योजना का पहला सैद्धांतिक आधार भी है। बाड़ बंदी से ही खेत में उचित कृषि–वातावरण तैयार करने वाले पेड़–पौधों को योजनाबद्ध लगाया जाता है। चयनित प्रक्षेत्र में उत्पादन व्यवस्थाऐं विकसित करने के लिए उचित आकार के इकाई खेतों का चुनाव तथा संसाधनों के अनुरूप सब्जी फसलों का चयन किया जाता है। प्रक्षेत्र में खेजड़ी की किस्म **Fkkj 'kksHkk** को उत्पादन प्रारूपों (crop production models) में लगाया जाता है तथा ये आधार वृक्ष खेती के लिए अनुकूल कृषि–वातावरण विकसित करने में सहायक रहेंगे। संस्थान में प्रक्षेत्र विकास एवं प्रबंधन तकनीक पर सतत् अध्ययनों से यहाँ की जलवायु के अनुरूप सब्जी उत्पादन के लिए तीन प्रकार के संयोजनों वाली व्यवस्थायें व्यावसायिक खेती के लिए उपयुक्त हैं एवं इनको इस प्रकार परिभाषित किया गया है:–

¼v½ tSfod iapdqVk mRiknu rduhd
(organic *Panchkutta* production technology)

इसमें पंचकूटा सब्जी की पाँच स्थानीय फसलों का जैविक पद्धति एवं वर्षा आधारित उत्पादन के लिए खेजड़ी की किस्म थार शोभा के एकल बगीचे 4 x 4 या 8 x 8 मीटर इकाई खेत (एक हैक्टेयर) में विकसित करने होते हैं। बगीचे के किनारों की चारों दिशाओं में चार मीटर की दूरी पर एकल अथवा जोड़े (4x4 मीटर) में लसोड़ा (दक्षिण), केर (पूर्व व पश्चिम) एवं कुमट (उत्तर) के बीजू पौधों की पट्टिकायें उत्पादन प्रारूप में तैयार की जाती हैं। बगीचों के मध्य की भूमि पर काचरी की व्यवस्थित खेती की जाती है।

¼c½ vYiÁpfyr lCth mRiknu rduhd (bari /native vegetable production technology)

वर्षा आधारित सब्जी उत्पादन की इस व्यवस्था में खेजड़ी के एकल बगीचे 8 x 8 मीटर इकाई खेत (एक हैक्टेयर) में विकसित करने होते हैं तथा प्रक्षेत्र के किनारों की चारों दिशाओं में चार मीटर की दूरी पर एकल अथवा जोड़े (4x4 मीटर) में लसोड़ा व खेजड़ी (दक्षिण), केर (पूर्व व पश्चिम) तथा कुमट व बोरड़ी (उत्तर) के बीजू पेड़–पौधों की पट्टिकायें तैयार की जाती हैं। बगीचों के मध्य की भूमि पर काचरी, फूट ककड़ी, मतीरा, टिंडा या ग्वारफली की व्यवस्थित खेती की जाती है।

¼l½ 0;kolkf;d lCth mRiknu rduhd (intensive vegetable production technology)

इस व्यवस्था में खेजड़ी को 4 x 4 मीटर के जोड़ों में अधिकतम दूरी की पट्टिकाओं (24 या 48 मीटर के अंतराल) के इकाई खेत (1–4 हैक्टेयर) विकसित करने होते हैं। प्रक्षेत्र के किनारों की चारों दिशाओं में चार मीटर की दूरी पर एकल अथवा जोड़े (4x4 मीटर) में लसोड़ा व खेजड़ी (दक्षिण), केर (पूर्व व पश्चिम) तथा कुमट व बोरड़ी (उत्तर) के बीजू पेड़–पौधों की पट्टिकायें तैयार की जाती हैं। खेजड़ी पट्टिकाओं के मध्य की भूमि को सब्जियों की खेती के लिए तैयार कर नाली, बूँद–बूँद या फव्वारा तकनीकी से फसल उत्पादन किया जाता है।

[ksr dh rS;kfj;k

प्रक्षेत्र प्रबंधन तकनीकी में खरीफ फसलों की बुवाई पूर्व तथा कटाई पश्चात् खेत की समय पर तैयारियाँ एवं कृषि क्रियाऐं जिनमें गहरी जुताई, वर्षा जल संग्रहण व नमी संरक्षण को अपनाना प्रमुख है। देश व प्रदेश में मानसून आगमन की सूचनाओं के साथ ही फसल उत्पादन के लिए खेत तैयार कर जून महीने में गहरी जुताई करें। इसी समय भेड़–बकरी या गोबर की खाद का बिखराव कर जून के अंतिम सप्ताह में पुनः जुताई करें तथा पाटा लगाकर खेत को फसल बुवाई के लिए तैयार रखना चाहिए। फसल को दीमक एवं भूमिगत कीड़ों से बचाव के लिए मिथाइल पेराथियान (2%) 25 किलोग्राम/हैक्टेयर पाउडर का भुरकाव खेत में पाटा लगाने से पहले करना चाहिए। संस्थान में प्रक्षेत्र विकास के अध्ययनों से यह पाया गया कि पहली जुताई जून महीने के दूसरे पखवाड़े तथा फसल उत्पादन के लिए वर्णित तकनीकी से तैयार खेत में वर्षा जल अधिक संग्रहित व संरक्षित रहता है एवं खरपतवार भी कम होते हैं। इसी तरह खरीफ फसल की कटाई पश्चात् नवम्बर–दिसम्बर में जुताई से इनके अवशेष व खरपतवार भूमि में मिल जाते हैं तथा सर्दियों में होने वाली वर्षा (मावठ) का जल भी खेत में अधिक संचित होता है। ग्रीष्मकालीन फसल बुवाई के लिए जनवरी–फरवरी में दो बार हैरो से जुताई पश्चात् पाटा लगाकर खेत को तैयार कर लेना चाहिए। इस तरह तैयार खेतों में संसाधनों के अनुरूप क्यारी, कुड, नाली या बूँद–बूँद विधि अपनाकर काचरी फसल उत्पादन लाभप्रद रहता है।

[kkn&mo.jd Ác/ku rduhd

मरूस्थलीय रेतीली मिट्टी वाले खेतों में सब्जी फसल उत्पादन के लिए नियंत्रित परंतु लगातार खाद व उर्वरकों का उपयोग करना अनिवार्य है तथा यह मृदा की उर्वरा शक्ति बनाए रखने के लिए भी आवश्यक है। खेत में अच्छी जीवांश की मात्रा के लिए प्रतिवर्ष गोबर (200–250 क्विंटल/हैक्टेयर) या 5–6 ट्रेक्टर–ट्रॉली भेड़–बकरी की मींगनी खाद का उपयोग करें। इसी तरह हरी खाद के लिए यदि मानसून पूर्व की बरसात जून में अंतिम जुताई से

पहले होती है तो ढेंचा के बीजों (20–25 किलोग्राम/हैक्टेयर) का छिटकाँव करें। शुष्क क्षेत्रीय सब्जी फसलों में काचरी की व्यवस्थित खेती के लिए रासायनिक उर्वरकों में 80–100 किलोग्राम नाइट्रोजन, 40–50 किलोग्राम फॉस्फोरस एवं 40 किलोग्राम पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से देवें। नाइट्रोजन की आधी मात्रा तथा फॉस्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा फसल बुवाई के लिए तैयार की जा रहीं क्यारियाँ अथवा नालियाँ बनाने से पहले ही देवें।

संस्थान में सब्जी फसल उत्पादन एवं प्रबंधन के अनुसंधान कार्यों से नाली एवं बूँद–बूँद प्रणाली से काचरी की खेती के लिए खाद व उर्वरकों के उपयोग की समेकित व्यवस्था विकसित की गई है तथा इस तकनीकी में फल उत्पादन एवं संसाधनों की बचत के सार्थक परिणाम प्राप्त हुए हैं। इसके अंतर्गत तैयार मिश्रण जिसमें देशी खाद (50 क्विंटल), वर्मीकम्पोस्ट (5 क्विंटल), डाईअमोनियम फास्फेट (100 किलोग्राम), सिंगल सुपर फास्फेट (100 किलोग्राम), यूरिया (50 किलोग्राम), म्यूरेट आफ पोटाश (50 किलोग्राम) तथा मिथाइल पेराथियोन (10 किलोग्राम) प्रति हैक्टेयर की दर को खेत में रेखांकन कर नालियाँ बनाने से पहले 60 सेंटीमीटर चौड़ाई क्षेत्र एवं कतारों में बिखराव किया जाता है, ततपश्चात् इस भाग को तैयार कर फसल बुवाई की जाती है।

काचरी में नाइट्रोजन की शेष मात्रा को तीन बराबर भागों में विभक्त कर यूरिया (50–60 किलोग्राम/हैक्टेयर) का पहला भुरकाव फसल बुवाई के 18–25 दिनों बाद, दूसरा 30–35 दिनों पर जब पौधों में फैलाव एवं नर फूलों का आना प्रारम्भ होता है तथा अंतिम 45–50 दिनों पर जब फल जमाव प्रारम्भ होते हैं, उस समय करना सर्वाधिक उपयुक्त पाया गया है। वर्षा आधारित फसल में यूरिया का भुरकाव करते समय ध्यान रखें कि खेत में पर्याप्त नमी हो अथवा बरसात के दिन या सिंचाई के तुरन्त पश्चात् ही इसका उपयोग करें। इसी तरह बारानी फसल में यूरिया के 2 प्रतिशत घोल का (20 ग्राम/लीटर पानी) 300–500 लीटर/हैक्टेयर छिड़काव करना भी लाभदायक है। बूँद–बूँद तकनीकी से काचरी फसल में यूरिया का उपयोग 4–6 भागों में विभक्त कर 10–12 दिनों के अंतराल पर सिंचाई के साथ करना सर्वाधिक उपयुक्त रहा है।

Qly cokb| rduhd

शुष्क क्षेत्रीय जलवायु में सिंचाई की पर्याप्त व्यवस्था होने पर वर्षा एवं ग्रीष्मकालीन फसल उत्पादन के लिए योजनाबद्ध बुवाई से काचरी की व्यवस्थित खेती का कार्य करना चाहिए जिससे वातावरणीय रूकावटों के कारकों का इस पर कम से कम प्रभाव हो, साथ ही गुणवत्तायुक्त एवं अधिक उपज प्राप्त की जा सके। काचरी की वर्षा आधारित खेती के लिए जून के अंतिम सप्ताह से लेकर जुलाई महीने के अंत तक जब भी अच्छी वर्षा का दौर हो उसी समय बुवाई कार्य करें। इसी तरह वर्षा एवं ग्रीष्मकालीन सिंचित फसल के लिए बुवाई क्रमशः जुलाई एवं फरवरी महीने में करना सर्वाधिक उपयुक्त रहा है। सुनिश्चित सिंचाई व्यवस्था होने पर संसाधनों के अनुरूप उत्पादन तकनीक (नाली, बूँद–बूँद या फव्वारा विधि) अपनाकर चयनित किस्मों की सफलतापूर्वक खेती की जा सकती है, परंतु बुवाई का समय एवं प्रबंधन फसल की उत्पादकता को प्रभावित करते हैं इसलिए वातावरणीय कारकों की विश्लेषणात्मक जानकारियाँ रख कर यह कार्य किये जाने चाहिये।

यहाँ की जलवायु को एक उपयोगी संसाधन के रूप में अपनाते हुए काचरी उत्पादन के लिए नियमित अंतराल पर मध्य जनवरी से मार्च तथा जून–जुलाई में योजनाबद्ध फसल बुवाई कर सीमित सिंचाई जल एवं प्रक्षेत्र प्रबन्धन तकनीक अपनाकर इसके ताजा फलों की बाजार में अप्रैल से दिसम्बर तक उपलब्धता रखी जा सकती है। यहाँ दिसम्बर–जनवरी में अत्यधिक सर्दी ($<4^{0}$ C) एवं पाले की स्थिति तथा मई

से जुलाई तक प्रचण्ड गर्मी का प्रकोप होता है ऐसी विषमपरिस्थितियों में स्थानीय संसाधनों व कम लागत से बनाये संरक्षित गृहों जो कि पॉलीथीन या छायादार जालीनुमा चादर से ढके जाते हैं उनमें इसकी नर्सरी–पौध तैयार कर ली जाती है तथा इनकी खेत में रोपाई जनवरी के तीसरे सप्ताह अथवा जुलाई में कर अगेती फल उत्पादन किया जा सकता है।

संस्थान द्वारा विकसित प्रक्षेत्र प्रबंधन योजना के अंतर्गत डिग्गी आधारित सब्जियों की जल बचत खेती के साथ–साथ शुष्क क्षेत्रीय वातावरणीय प्रकोप जैसे – अत्यधिक सर्दी एवं पाला से बचाव के लिए फसल उत्पादन की स्वदेशी व्यवस्थायें विकसित की गई है। इस संरक्षित उत्पादन तकनीकी (channel covering / tent technology) में दिसम्बर के अंत से जनवरी के प्रथम सप्ताह तक बीजों की वर्णित विधियों से खेत में बुवाई कर नालियों/लोहे के ढाँचों को पॉलीथीन की चादर से ढका जाता है तथा इनमें प्रारंभ के 30–35 दिनों तक फसल को अत्यधिक ठण्ड व पाले के प्रकोप से सुरक्षित रखा जाता है एवं फरवरी के प्रथम सप्ताह में पॉलीथीन को हटाकर सामान्य कृषि क्रियाओं से अगेती फलन प्राप्त की जाती है।

काचरी की उन्नत किस्मों एवं इनके प्रमाणित बीजों का चुनाव करें तथा स्वस्थ एवं अधिक अंकुरण क्षमता वाले बीजों को बुवाई के उपयोग में लेना चाहिए। सामान्यतः एक हैक्टेयर फसल क्षेत्र के लिए 1.0–1.5 किलोग्राम बीज पर्याप्त हैं, परंतु यह मात्रा किस्म, बुवाई तकनीक एवं उत्पादन प्रबंधन पर निर्भर करती है। शीघ्र अंकुरण एवं अच्छी प्रारम्भिक वृद्धि के लिए बीजों को बुवाई से पहले 1–2 घंटे तक पानी में डुबाकर रखें अथवा गर्म पानी में नमक (20 ग्राम/लीटर) के साथ डुबाते हैं, जब हल्के व थोथे बीज पानी की सतह पर आ जाए तब उनको अलग कर देवें। इस क्रिया पश्चात् तले में बैठे बीजों को टाट की गीली पोटली में बाँध लेवें तथा इसे रात भर गोबर की खाद के गड्ढे या गड्ढा बना कर जमीन में रखें। इस तरह तैयार बीजों को बुवाई के तुरंत पहले कैप्टान, थाइरम या बैवेस्टिन (2–3 ग्राम दवा/किलोग्राम की दर) से उपचारित करें। संस्थान द्वारा विकसित फसल प्रबंधन तकनीकियों में किस्म एएचके–119 के बीजों को वर्णित विधि से उपचारित एवं नाली अथवा बूँद–बूँद प्रणाली में बुवाई के लिए 500–750 ग्राम/हैक्टेयर पर्याप्त रहा है।

फसल की बुवाई विधियाँ मुख्यतः उत्पादन प्रणालियों एवं सिंचाई जल प्रबंधन पर केन्द्रित होती हैं। काचरी की वर्षा आधारित खेती के लिए फसल बुवाई मिश्रित अथवा एकल पद्धति में छिटकाँव या कुड विधि से की जा सकती है। इसी तरह सिंचित फसल के लिए बुवाई क्यारी, कुड अथवा नाली विधि में कर सिंचाई बहाव, फव्वारा या बूँद–बूँद पद्धति से की जा सकती है। शुष्क क्षेत्र में सीमित वर्षा एवं डिग्गी आधारित सिंचाई व्यवस्थाओं से संस्थान द्वारा काचरी की जल बचत खेती के लिए फसल बुवाई की नवोन्वेषित विधियाँ विकसित की गई हैं जिनका वर्णन इस प्रकार है–

¼v½ ukyh fof/k

केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर में किये गये अनुसंधान कार्यों के निष्कर्षों के आधार पर वैज्ञानिक ढंग से काचरी की खेती के लिए नाली विधि सर्वोतम है। इस विधि में पाटा लगा कर तैयार किए खेत में 1.5–2.0 मीटर दूरी के अंतराल पर 50–60 सेमी चौड़ाई की हल्की–गहरी नालियाँ बनायी जाती हैं। खेत में पानी आपूर्ति की मुख्य नाली के दोनों ओर 25–30 मीटर लम्बाई की नालियाँ फसल बुवाई के लिए तैयार की जाती हैं तथा इन्हें पूर्व से पश्चिम दिशा की ओर ही बनाना चाहिए। रेखांकन कर बनाई गई इन नालियों में खाद–उर्वरकों के मिश्रण को अच्छी तरह मिलाकर बुवाई के लिए तैयार किया जाता है। नालियों के अंदर की उत्तरी ढलान

पर 50—50 सेमी की दूरी के अंतराल पर 3—4 बीजों की बुवाई करें। अंकुरण पश्चात् जब पौधों में 2—4 वास्तविक पत्तियाँ आ जाती हैं अथवा 18—21 दिनों के होते हैं तब प्रत्येक बुवाई स्थल पर एक या दो स्वस्थ पौधे रखकर शेष को निकाल देवें। जब पौधे 30—35 दिनों के होने लगें तब उनको नालियों से बाहर बेल फैलने वाली जगह की ओर मोड़ देना चाहिए तथा इनके आस—पास स्थानीय घास—फूस की पलवार करें।

नाली विधि में पौधों की प्रारम्भिक अवस्था में देखभाल एवं निराई—गुड़ाई कार्य सहजता से किये जा सकते हैं। वर्षा दिनों में नालियों एवं इसके आस—पास के ढलान क्षेत्र में जल अधिक मात्रा में संग्रहित होता है जो फसल के लिए लाभदायक रहता है। इस तकनीकी में फसल के लिए खाद—उर्वरक एवं सिंचाई जल इन्हीं नालियों में दिया जाता है जिससे इनकी अधिक मात्रा में बचत होती है। संस्थान में फसल उत्पादन की नाली विधि से खेती कर लगभग एक तिहाई खाद—उर्वरक, सिंचाई जल एवं मानव श्रम जैसे बहुमूल्य संसाधनों की बचत के साथ अधिक उपज प्राप्त की है। डिग्गी आधारित सुनिश्चित सिंचाई व्यवस्था से नाली विधि में ही बूँद—बूँद पद्धति अपनाकर सीमित जल से फसल उत्पादन एवं प्रबंधन तकनीक विकसित की गई है तथा यह काचरी की व्यावसायिक खेती के लिए सर्वाधिक लाभप्रद रही है।

¼c½ d|M fof/k

रेतीले टिब्बों वाले या असमतल खेतों में काचरी की वर्षा आधारित अथवा फव्वारा सिंचाई से फसल उत्पादन के लिए कुड विधि से बुवाई करना सर्वाधिक उपयुक्त रहता है। खेत में इसकी एकल फसल उत्पादन के लिये 2—2 मीटर की दूरी के अंतराल पर देशी हल से गहरे कुड बनाते हुए उर्वरकों के साथ—साथ बीज बुवाई की जाती है अथवा इन कुडों में 50—50 सेमी की दूरी के अंतराल पर 3—4 बीजों की बुवाई भी की जा सकती है। अंकुरण पश्चात् जब 2—4 वास्तविक पत्तियाँ आ जाती हैं तब प्रत्येक बुवाई स्थल पर 1—2 स्वस्थ पौधे ही रखें तथा इसी समयावधि में निराई—गुड़ाई एवं अंतराशस्य क्रियाऐं करें, ततपश्चात् कुडों को हल्की नालियों जैसा स्वरूप दे देना चाहिए। इस विधि से बुवाई करने पर नाली विधि की तरह ही फसल उत्पादन एवं प्रबन्धन तकनीकियों को अपनाकर व्यवस्थित खेती की जा सकती है। वर्षा आधारित फसल में सूखे की स्थिति होने पर यदि फव्वारा पद्धति से 1 या 2 जीवनदायी सिंचाई व्यवस्थायें सुनिश्चित उत्पादन के लिए लाभप्रद रहती हैं, जबकि ग्रीष्मकालीन फसल उत्पादन के लिए सिंचाई एक नियमित अंतराल से की जाती है।

¼l½ fefJr Qly fof/k

परम्परागत खेती में स्थानीय सब्जी फसलों के मिश्रित बीजों की बुवाई छिटकाँव विधि से की जाती है। इस तरह बुवाई करने से पौधे अव्यवस्थित उगते हैं जिससे इनकी सही ढंग से संभाल नहीं हो पाती है तथा फसल में उन्नत क्रियाओं को भी नहीं अपनाया जा सकता है। मिश्रित खेती में बेलवाली सब्जी फसलों की भी कतारों एवं कुड विधि अपनाकर सहजतापूर्वक बुवाई की जा सकती है, जिसके अंतर्गत 5—6 मीटर की दूरी के अंतराल पर हल से कुड बनाते हुए बुवाई कार्य किया जाता है। अंकुरण पश्चात् जब 2—4 वास्तविक पत्तियाँ आ जाती हैं तब प्रत्येक बुवाई स्थल पर 1—2 स्वस्थ पौधे ही रखें एवं इसी समयावधि में आवश्यक अंतराशस्य क्रियाऐं भी की जाती हैं। बुवाई की इस तकनीकी से फसलें व्यवस्थित होती हैं तथा इनमें अंतराशस्य व सुरक्षा क्रियाऐं एवं फल तुड़ाई कार्य आसानी से किये जा सकते हैं।

lLFkku }kjk fodflr ukyh rduhdh d vrxr [kr dh r;kfj;k] Qly cokbl rFkk mRiknu ic/ku

चयनित प्रक्षेत्र में मानसून पूर्व की गहरी जुताई एवं फसल उत्पादन के लिए खेत की तैयारियाँ

खेत में व्यवस्थित रेखांकन से नालियाँ तैयार कर सीमित वर्षा एवं सिंचाई जल प्रबंधन से फसल उत्पादन

सीमित वर्षा, सिंचाई जल एवं संसाधनों के साथ नाली विधि में उन्नत कृषि क्रियाओं से फसल प्रबंधन

संस्थान द्वारा विकसित प्रक्षेत्र प्रबंधन में बूंद-बूंद तकनीकी से उत्पादन

'kq"d tyok;q esa 0;ofLFkr ckxokuh ds fy, laLFkku }kjk fodflr [ktwjh vk/kkfjr i{ks= fodkl ,oa lCth Qly mRiknu izca/ku rduhd

बागवानी आधारित प्रक्षेत्र विकास के अंतर्गत खेत का चयन व विधिवत् तैयारियाँ तथा फसल सुरक्षा प्रबंधन के लिए तार बंदी व स्थानीय पेड़–पौधों को प्रारूप के अनुरूप स्थापित करना।

प्रक्षेत्र प्रबंधन के अंतर्गत वर्षा जल संग्रहण एवं नमी संरक्षण के लिए खेत में गहरी जुताई कार्य – जून महीने के अंतिम पखवाड़े अथवा क्षेत्र में मानसून आगमन की सूचना के पूर्व तथा फसल कटाई पश्चात्।

फसल उत्पादन प्रबंधन के अंतर्गत समय पर जुताई एवं पाटा लगााकर तैयार क्षेत्र में रेखांकन कर कुड, नाली, बूँद–बूँद अथवा फव्वारा पद्धति से बुवाई के लिए खेत की तैयारियाँ।

काचरी उत्पादन के लिए खेत में नाली तकनीकी के अंतर्गत दो–दो मीटर की दूरी के अंतराल पर खाद–उर्वरकों का उपयोग, फसल बुवाई एवं जल प्रबंधन क्रियाऐं।

फसल उत्पादन प्रबंधन तकनीकों के अंतर्गत नाली विधि से बुवाई के 15–18 दिनों पर पौध संख्या निर्धारण तथा खेत में अंतराशस्य क्रियाओं के साथ–साथ स्थानीय घास–फूस से पलवार।

बूँद–बूँद तकनीकी से काचरी फसल उत्पादन के अंतर्गत खेत में दो–दो मीटर की दूरी के अंतराल पर लेट्रल पाइपों का व्यवस्थिकरण, खाद–उर्वरकों का उपयोग, बुवाई एवं सिंचाई प्रबंधन।

बूँद–बूँद तकनीकी के अंतर्गत फसल उत्पादन प्रबंधन में बुवाई के 15–18 दिनों पर पौध संख्या निर्धारण तथा व्यवस्थित अंतराशस्य एवं सुरक्षा क्रियाऐं।

संस्थान द्वारा विकसित प्रक्षेत्र विकास एवं फसल उत्पादन प्रबंधन तरीकों को अपनाकर सीमित संसाधनों तथा बूँद–बूँद तकनीकी से काचरी की व्यवस्थित खेती।

संस्थान द्वारा विकसित प्रक्षेत्र विकास एवं फसल उत्पादन प्रबंधन तरीकों को अपनाकर सीमित संसाधनों तथा बूँद–बूँद तकनीकी से काचरी की व्यवस्थित खेती।

संस्थान द्वारा विकसित खेजड़ी आधारित प्रक्षेत्र विकास तथा फसल उत्पादन प्रबंधन तकनीकों को अपनाकर सीमित वर्षा, सिंचाई एवं बूँद–बूँद पद्धति से काचरी की व्यवस्थित खेती।

खेजड़ी आधारित प्रक्षेत्र विकास तथा फसल उत्पादन की नवोन्वेषित तकनीकियाँ अपनाकर सीमित वर्षा एवं संसाधनों में काचरी की बूँद–बूँद तथा नाली पद्धति से खेती।

संस्थान द्वारा विकसित खेजड़ी आधारित प्रक्षेत्र विकास एवं प्रबंधन तकनीकी में 24 या 48 मीटर की दूरी के प्रारूप (KM-9 & KM-11) में 4×4 मीटर जोडे में पट्टिकायें तथा पट्टिकाओं के मध्य खेत के रूप में व्यवस्थित काचरी फसल उत्पादन।

laLFkku }kjk fodflr ,oa izlkfjr fMXxh vk/kkfjr i{k= fodkl rFkk lajf{kr lCth Qly mRiknu rduhdh O;oLFkk;sa

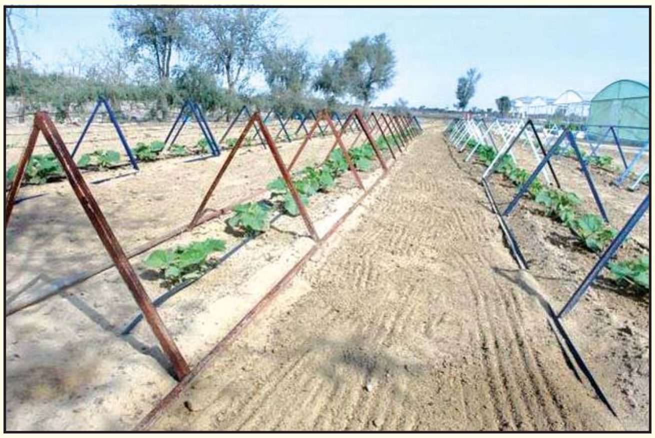

संस्थान द्वारा विकसित प्रक्षेत्र प्रबंधन योजना के अंतर्गत डिग्गी आधारित सब्जियों की जल बचत खेती के साथ–साथ शुष्क क्षेत्रीय वातावरणीय प्रकोप जैसे – अत्यधिक सर्दी, पाला एवं गर्मी से बचाव के लिए फसल उत्पादन की स्वदेशी व्यवस्थायें विकसित की गई है। इस संरक्षित उत्पादन तकनीकी (channel covering / tent technology) में दिसम्बर के अंत से जनवरी के प्रथम सप्ताह तक बीजों की वर्णित विधियों से बुवाई कर नालियों/लोहे के ढाँचों को पॉलीथीन की चादर से ढका जाता है तथा इनमें प्रारंभ के 30–35 दिनों तक फसल को अत्यधिक ठंड व पाले के प्रकोप से सुरक्षित रखा जाता है एवं फरवरी के प्रथम सप्ताह में पॉलीथीन को हटाकर फसल में सामान्य कृषि क्रियाओं से अगेती फलन प्राप्त की जाती है।

सारणी–12: नाली विधि से व्यवस्थित फसल उत्पादन में नवोन्वेषित तकनीकी उपचारों का काचरी की उपज पर प्रभाव (किस्म एएचके–119 का वर्षा एवं ग्रीष्म ऋतु की फसलों से औसत)

क्र. सं	नाली विधि (0.60 + 1.40 × 0.50 मीटर) में नवोन्वेषित तकनीकी उपचार	फल उपज (क्विं./है.)
1	नाली विधि में सामान्य उन्नत तकनीकियों के साथ फसल उत्पादन	93.5
2	नाली विधि में सामान्य उन्नत तकनीकियों के साथ बुवाई के 18–21 दिन बाद फसल के आस–पास स्थानीय घास–फूस की पलवार के साथ उत्पादन	98.2
3	नाली विधि में सामान्य उन्नत तकनीकियों के साथ पौधों में जब 2–4 वास्तविक पत्तियाँ आ जाती हैं अथवा बुवाई के 15–18 दिन बाद जिब्रेलिक अम्ल 20 पीपीएम प्रति लीटर पानी की दर से घोल का छिड़काव कर फसल उत्पादन	95.6
4	नाली विधि में सामान्य उन्नत तकनीकियों के साथ बुवाई के 25 तथा 35 दिनों बाद यूरिया (2 प्रतिशत, 20 ग्राम/लीटर पानी) का छिड़काव कर फसल उत्पादन	94.2
5	नाली विधि में सामान्य उन्नत तकनीकियों के साथ बुवाई के 25 दिनों बाद थायो–यूरिया (100 पीपीएम/लीटर पानी) का छिड़काव कर फसल उत्पादन	94.5
6	कुण्ड विधि से खेती (तैयार खेत में देशी हल से 2 मीटर की दूरी के अंतराल पर गहरे कुंड बनाकर बीज बुवाई तथा उन्नत कृषि क्रियाऐं अपनाकर फसल उत्पादन)	78.5

सारणी–13: प्रक्षेत्र प्रबंधन में नाली तकनीकी से पूर्णतया वर्षा आधारित काचरी किस्म एएचके–119 का फसल उत्पादन प्रर्दशन (वर्ष 2010 से 2012 का औसत)।

लक्षण	नाली विधि से वर्षा आधारित फसल उत्पादन
बुवाई बाद प्रथम नर फूलों के खिलने में लगे दिनों की संख्या	30.8
बुवाई बाद प्रथम मादा फूलों के खिलने में लगे दिनों की संख्या	34.7
बुवाई बाद प्रथम तुड़ाई में लगे दिनों की संख्या	70.4
फल का वजन (ग्राम)	65.8
फल की लम्बाई (सेमी)	5.63
फल का व्यास (सेमी)	4.29
विपणन योग्य फलों की संख्या/पौधा	19.8
फल उपज/पौधा (किलोग्राम)	1.43
फल उपज/हैक्टेयर (क्विं.)	98.84
बीजों की संख्या/फल	304.6
बीज उपज/पौधा (ग्राम)	61.88
बीज उपज/हैक्टेयर (क्विं.)	3.82

सारणी–14: प्रक्षेत्र प्रबंधन में नाली तथा बूँद–बूँद तकनीकी में सीमित जल प्रबंधन से काचरी किस्म एएचके–119 का फसल उत्पादन प्रर्दशन (वर्ष 2008 से 2010 की ग्रीष्म एवं वर्षाकालीन फसलों से औसत)।

लक्षण	नाली तकनीकी	बूँद–बूँद तकनीकी
बुवाई बाद प्रथम नर फूलों के खिलने में लगे दिनों की संख्या	29.2	31.5
बुवाई बाद प्रथम मादा फूलों के खिलने में लगे दिनों की संख्या	32.5	34.1
बुवाई बाद प्रथम तुड़ाई में लगे दिनों की संख्या	68.4	72.2
फल का वजन (ग्राम)	62.2	67.5
फल की लम्बाई (सेमी)	5.22	5.75
फल का व्यास (सेमी)	4.17	4.46
विपणन योग्य फलों की संख्या/पौधा	18.6	24.5
फल उपज/पौधा (किलोग्राम)	1.15	1.65
फल उपज/हैक्टेयर (क्विं.)	95.4	129.5
बीजों की संख्या/फल	279.5	355.8
बीज उपज/पौधा (ग्राम)	52.55	71.25
बीज उपज/हैक्टेयर (क्विं.)	3.56	4.25

सारणी–15: काचरी फसल उत्पादन लागत तथा ताजा फलों के विपणन से आय का विवरण (मानव श्रम भाव, आधार वर्ष 1998)।

उन्नत तकनीकी से व्यवस्थित खेती की विधि	फल उपज (क्विं./है.)	कुल आय (रू./है.)	उत्पादन लागत (रू./है.)	शुद्ध लाभ (रू./है.)
(अ) मिश्रित खेती में उत्पादन	8–10	1600–2000	600–800	1000–1200
(ब) एकल खेती में नाली विधि से उत्पादन	80–100	16000–20000	9000–12000	7000–8000

सारणी–16: काचरी फसल उत्पादन लागत तथा सुखाकर फलों के विपणन से आय का विवरण (मानव श्रम भाव, आधार वर्ष 1998)।

उन्नत तकनीकी से व्यवस्थित खेती की विधि	सूखे फल (क्विं./है.)	कुल आय (रू./है.)	उत्पादन लागत (रू./है.)	प्रसंस्करण लागत (रू./है.)	शुद्ध लाभ (रू./है.)
(अ) मिश्रित खेती में उत्पादन	0.8–1.0	3200–4000	600–800	400–500	2200–2700
(ब) एकल खेती में नाली विधि से उत्पादन	8.0–10.0	32000–40000	9000–12000	4000–5000	19000–23000

t y Ác/ku

प्रतिकूल जलवायु में सब्जी फसल उत्पादन तकनीकियाँ विकसित करते समय जल संरक्षण, स्थानीय संसाधनों का समुचित उपयोग, लागत, उपज एवं स्थिरता जैसे मुख्य घटकों को ध्यान में रखा जाना आवश्यक है। संस्थान में काचरी फसल एवं उत्पादन तकनीकी विकास के योजनाबद्ध अनुसंधान कार्य वर्ष 1994 से 2012 तक इस तरह किये गये जिससे शुष्क क्षेत्रीय जलवायु में इसकी सफलतापूर्वक व्यावसायिक खेती सीमित जल संसाधन के उपयोग तथा न्यूनतम लागत से की जा सके। इसके अंतर्गत बुवाई की विधियों एवं जल प्रबंधन तरीकों को इस तरह जोड़ा गया जिससे काचरी उत्पादन संबंधी आँकड़ों का मूल्यांकन किया जा सके तथा इसमें क्यारी, कुड, नाली एवं बूँद–बूँद विधियों के विभिन्न स्तरों को फसल की किस्म एवं मौसम आधारित जाँचा गया। सतत् अनुसंधान कार्यों के निष्कर्षों के आधार पर काचरी फसल उत्पादन एवं जल प्रबंधन तकनीकियों को इसकी वैज्ञानिक खेती के लिए प्रसारित किया जा रहा है।

सब्जी फसलों की नाली विधि से उत्पादन एवं सिंचाई प्रबंधन द्वारा एक तिहाई जल (33 प्रतिशत) की बचत होती है। क्यारी विधि में जहाँ पूरे फसल क्षेत्र को सिंचित किया जाता है वहीं नाली विधि में पौधों की सिंचाई इन्हीं नालियों में ही की जाती है तथा बेल फैलने वाला लगभग दो तिहाई क्षेत्र असिंचित रखा जाता है। प्रायः किसान क्यारी या कुड विधि से बेलवाली फसलों की बुवाई कर फव्वारा पद्धति (sprinkler system) से पूरे क्षेत्र में सिंचाई करते हैं जिससे अधिक जल एवं संसाधनों की आवश्यकता होती है। पूरे फसल क्षेत्र में सिंचाई करने से खरपतवार अधिक पनपते हैं तथा खेत में लगातार नमी बनी रहने से फल खराब हो जाते हैं। सब्जी फसलों में सिंचाई एवं जल प्रबंधन अनुसंधान कार्य के आधार पर बहाव विधियों में नाली विधि (channel technology) सर्वोत्तम एवं सरल है। नाली विधि में एक ओर जहाँ सिंचाई जल की अधिक बचत होती है, वहीं दूसरी ओर बरसात के दिन यह नालियाँ जल संग्रहण का कार्य भी करती हैं। इस विधि से सिंचाई करते समय इस बात का ध्यान अवश्य रखें कि पानी बेल फैलने वाले क्षेत्र में नहीं बहे। शुष्क व अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में जहाँ सिंचाई की पर्याप्त सुविधा है, वहाँ समतल खेतों में नाली विधि से काचरी की ग्रीष्मकालीन खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है। नाली विधि में फसल की प्रारम्भिक अवस्था से पौधों में फल जमाव होने तक 6–7 दिनों के अन्तराल पर सिंचाई करें। ग्रीष्मकालीन फसल पकने के समय कई बार भीषण गर्मी एवं धूल भरी आंधियों का प्रकोप हो जाता है, अतः ऐसी स्थिति में फसल सुरक्षा के लिए समय पर सिंचाई प्रबन्धन करना आवश्यक है।

सुनिश्चित सिंचाई व्यवस्था में बूँद–बूँद पद्धति (drip irrigation) से शुष्क क्षेत्रीय सब्जी फसल उत्पादन के उत्साहजनक परिणाम मिले हैं। इस तकनीकी में न केवल जल की बचत होती है, साथ ही फसलों में अच्छी वानस्पतिक वृद्धि होने से विपणन योग्य फलों की संख्या में भी बढ़ोतरी होती है। शुष्क क्षेत्रीय जलवायु को आधार बनाकर किये गए अनुसंधान कार्यों से बूँद–बूँद तकनीकी में काचरी फसल के लिए 14–16 मिलीमीटर व्यास की एकल पाइप लाइनें (laterals, 14–16 mm) जिन पर 50–50 सेमी की दूरी के अन्तराल पर चार लीटर प्रति घंटा पानी छोड़ने वाले इन–लाइन ड्रीपरर्स (in-line drippers, 4lph) सर्वाधिक उपयुक्त रहे हैं। चयनित खेत में रेखांकन कर 2–2 मीटर की दूरी के अंतराल पर एकल पाइपों (laterals) को विधिवत् बिछाया जाता है तथा इनको मध्य में बिछी 50–75 मिलीमीटर व्यास की पानी आपूर्ति की पाइप लाइन से जोड़ा जाता है। मुख्य पाइप लाइन से जोड़ी जाने वाली अस्थायी लेट्रल पाइपों की एक तरफा लम्बाई 25 मीटर तक सीमित

रखनी चाहिए तथा इनको पूर्व से पश्चिम दिशा की ओर ही बिछावें। पाटा लगाने के पश्चात् तैयार खेत में जिन जगहों पर लेट्रल पाइपों के मुहाने आ रहे हैं उन्हीं के आस–पास 50–60 सेमी चौड़ाई की हल्की–गहरी नालियाँ या गहरे कुण्ड बनाये जाते हैं तथा इनमें खाद–उर्वरकों का मिश्रण अच्छी तरह मिलाकर इनको पुनः नाली स्वरूप तैयार किया जाता है, ततपश्चात् इनके मध्य में लेट्रल पाइपों को व्यवस्थित कर बुवाई कार्य किया जाता है। प्रारम्भिक हल्की सिंचाई कर प्रत्येक इन–लाइन ड्रिपर वाले स्थान के पास 3–4 बीजों की बुवाई करें। काचरी की जल बचत खेती में बूँद–बूँद तकनीकी से 3–4 दिनों के अन्तराल पर सिंचाई करना सर्वाधिक उपयुक्त पाया गया है। फसल में अच्छी वानस्पतिक वृद्धि एवं उत्पादकता के लिए पौधों की प्रारम्भिक अवस्था में 1.0–1.5 घंटा तथा फलन के समय 1.5–2.0 घंटा सिंचाई करना सर्वोतम रहा है। सम्भव हो तो सिंचाई शाम के समय करें तथा फसल प्रबंधन संबंधी कृषि क्रियाओं के लिए मौसम आधारित सूचनाओं का उपयोग भी करना चाहिए।

uoksUosf"kr varjk'kL; fØ;k,sa

मरूक्षेत्र में खेत की रेतीली एवं बलुई मिट्टी वर्षा या सिचांई पश्चात् कठोर परत के रूप में जम जाती है जिससे बीज अंकुरण एवं नवोदित पौधों की प्रारम्भिक वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है, इसलिए अंकुरण पश्चात् पौधों के आस–पास हल्की निराई–गुड़ाई करनी चाहिए। कुड, नाली या बूँद–बूँद तकनीकी से फसल की प्रारम्भिक अवस्था (12–25 दिन) में सिंचाई पश्चात् पौधों के आस–पास 1–2 हल्की निराई–गुड़ाई कार्य काचरी में सर्वाधिक लाभप्रद रहा है। इन अंतराशस्य क्रियाओं से जड़ों में वायु संचार अच्छा बना रहता है तथा छोटी अवस्था से ही अवांछनीय पौधों एवं खरपतवारों को निकाला जा सकता है। काचरी की अधिक फल उपज के लिए उसके पौधों में उचित वानस्पतिक वृद्धि आवश्यक है इसलिए खेत का बुवाई वाला नाली या कुड क्षेत्र सदैव खरपतवारों से मुक्त रखा जाना चाहिए। इसी तरह बेल फैलने वाले क्षेत्र में 1–2 निराई–गुड़ाई कार्य कर खरपतवारों से मुक्त रखें तथा इसके लिए बुवाई के 25–40 दिनों के मध्य रोटावेटर या पावर टिलर से हल्की जुताई कार्य से इनका प्रभावी नियंत्रण किया जा सकता है।

काश्तकारी जागरुकता तथा सिंचाई संसाधनों के विकास से शुष्क एवं अर्द्धशुष्क क्षेत्रों के किसान काचरी की ग्रीष्मकालीन फसल पर विशेष ध्यान दे रहे हैं, परंतु यहाँ अत्यधिक तापमान, वाष्पीकरण एवं गर्म हवाओं की स्थितियाँ इसकी उत्पादकता को प्रभावित करती हैं। यहाँ की रेतीली भूमि में पानी रोकने की क्षमता बहुत ही कम होती है इसलिए पौधों में पानी की कमी एवं माँग के कारण फसल में अधिक सिंचाई जल की आवश्यकता होती है। अतः फसल उत्पादन के लिए प्रक्षेत्र में उचित कृषि–वातावरण बनाने के साथ ही वर्षा जल संग्रहण एवं नमी संरक्षण एक प्रमुख आवश्यकता है। इस दिशा में संस्थान द्वारा खेजड़ी आधारित प्रक्षेत्र विकास के साथ–साथ कई नवोन्वेषित क्रियाओं जैसे – खेत की वर्षा आगमन पूर्व की गहरी जुताई, नाली या गहरे कुड बनाकर खेती, समय–समय पर निराई–गुड़ाई एवं अंतराशस्य क्रियाऐं, खरपतवार रहित खेत, पलवार बिछाकर नमी संरक्षण तथा मौसम आधारित सूचनाओं के साथ सिंचाई प्रबन्धन की सुनियोजित एवं वैज्ञानिक व्यवस्थायें विकसित की हैं, जिनको अब किसान कम संसाधनों में भी काचरी उत्पादन के लिए अपना सकते हैं। काचरी के लिए खेतों की जून एवं दिसम्बर महीने के अंतिम सप्ताह में गहरी जुताई से वर्षा जल अधिक संग्रहित होता है तथा इस तरह तैयार खेत में नमी लम्बे समय तक बनी रहती है एवं फसल में खरपतवार भी कम पनपते हैं। बुवाई की नाली या कुण्ड तकनीकी से बरसात के दिनों में इनमें अधिक जल संग्रहित होता है जो काचरी फसल में सर्वाधिक लाभप्रद है।

फसल में नियमित अंतराल पर निराई–गुड़ाई कार्य से भूमि की ऊपरी सतह का सम्पर्क निचली सतह से टूट जाने से खेत में संरक्षित जल का वाष्पीकरण रूक जाता है तथा पौधों के आस–पास लगातार गुड़ाई कार्य से इनकी जड़ों में हवा का संचालन सुचारू रहता है जिससे फसल को अनुकूल लाभ मिलता है। खेत में बेल फैलने वाली भूमि पर स्थानीय घास–फूस से पलवार (mulching) करने से नमी तो सुरक्षित रहती है, साथ ही जमीन का तापमान भी कम हो जाता है जिससे पौधों में अधिक फल जमाव एवं नव विकसित फलों का विकास अच्छा रहता है। पलवार से रेत के गर्म कणों को छोटे मुलायम फलों तक जाने से रोका जा सकता है जिससे फल विकास एवं उत्पादन पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। सीमित जल संसाधनों में मौसम आधारित सूचनाओं के उपयोग से नाली या बूँद–बूँद तकनीकी से काचरी फसल में एक नियमित अंतराल पर सिंचाई प्रबंधन द्वारा अधिक गुणवत्ता वाला फलोत्पादन किया जा सकता है। संस्थान में काचरी की फसल में एकीकृत नमी संरक्षण, सिंचाई जल प्रबन्धन एवं नवोन्वेषित कृषि क्रियाओं को अपनाकर 35–50 प्रतिशत अधिक फल उपज प्राप्त की गई है जिसका मुख्य कारण पौधों में अच्छी वानस्पतिक वृद्धि, फल जमाव तथा विपणन योग्य फलों की संख्या में बढ़ोतरी का होना है।

Qly lj{kk Ác/ku

सब्जियों में जैविक एवं अजैविक कारकों से कम से कम नुकसान रखना ही उत्पादन में वृद्धि का एक उत्तम तरीका हो सकता है। फसलों को हानि पहुँचाने वाले विभिन्न प्रकार के कीड़ों एवं बीमारियों के अलावा वातावरण में अचानक परिवर्तन से पैदा होने वाली स्थितियाँ भी हैं जो इनकी वानस्पतिक वृद्धि एवं उत्पादन को प्रभावित करती हैं। अतः फसल प्रबन्धन में ऐसी व्यवस्थायें हों जिसमें सुरक्षा की मिली–जुली प्रणालियाँ अपनायी जा सकें जिससे संतुलित व सुरक्षित बचाव एवं समय पर नियंत्रण किया जा सके। संस्थान द्वारा बागवानी फसल उत्पादन के लिए विकसित प्रक्षेत्र प्रबन्धन एक ऐसा घटक है जिसके अन्तर्गत उन सभी उन्नत एवं नवोन्वेषित तकनीकों का क्षेत्रीय जलवायु के अनुरूप सुनियोजित समावेश किया जाता है जिससे सब्जी उत्पादन के लिए खेत में उचित कृषि वातावरण तैयार होता है जो इनको विपरीत परिस्थितियों वाली जलवायु, जंगली जानवरों व पक्षियों तथा कीड़ों एवं बीमारियों के प्रकोप से बचाव कर सुरक्षित रखता है।

खेजड़ी आधारित प्रक्षेत्र प्रबंधन की इस तकनीकी में सब्जी उत्पादन के लिए खेत का चयन, प्रक्षेत्र विकास एवं समय–समय पर व्यवस्थित रख–रखाव क्रियाऐं तथा इनके आस–पास के खेतों की भी साफ–सफाई, इकट्ठा किया गया रोग ग्रस्त कचरे को नष्ट करना, बुवाई पूर्व एवं कटाई पश्चात् गहरी जुताई, फसल चक्र तथा मौसम आधारित सूचनाओं को उन्नत उत्पादन क्रियाओं के साथ अपनाना प्रमुख हैं। उन्नत एवं सुरक्षित फसल उत्पादन के अन्तर्गत खेत की जुताई से कटाई तक वह सभी क्रियाऐं जैसे स्वस्थ एवं उपचारित बीजों का उपयोग, व्यवस्थित बुवाई, संतुलित पोषण एवं मृदा स्वास्थ्य संरक्षण, लाभकारी जीवों व प्राणियों के लिए सुरक्षित खेती हेतु जैविक व रासायनिक तकनीकों का समन्वय इत्यादि शामिल है। व्यावसायिक स्तर पर सब्जियों की योजनाबद्ध एक के बाद एक मौसमी फसल उत्पादन किया जाता है वहाँ मात्र कृषि एवं जैविक क्रियाओं से कीड़ों व बीमारियों का प्रबन्धन नहीं किया जा सकता है अतः नियंत्रित एवं निर्धारित रासायनिक दवाओं का सुरक्षित उपयोग सम्भावित प्रकोप की आशंका को ध्यान में रखकर फसलों की अवस्थाओं के अनुरूप किया जाना चाहिए।

¼d½ ie[k dhV ,o fu;=.k

सामान्यतः काचरी फसल में कीड़ों का प्रकोप अत्यधिक कम पाया गया है। परंतु शुष्क एवं अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में इसकी व्यवस्थित खेती से फसल में मुख्यतः कद्दू का लाल भृंग (red pumpkin beetle), ऐपीलेकना भृंग (epilachna beetle), फल मक्खी (fruit fly), पर्ण जीव (aphids, thrips, jassids, white fly), माइट्स (mites) एवं कुछ अन्य प्रकार के कीड़े पौधों व फलों को क्षति पहुँचाते हैं तथा इनके प्रकोप का स्तर फसल प्रबंधन पर निर्भर है। काचरी में कीड़ों द्वारा कम से कम नुकसान हो इसलिए इनका समय पर प्रभावी बचाव एवं नियंत्रण जरूरी है तथा इस कार्य को सुरक्षा घटक के रूप में अपनाना चाहिए।

dnn dk yky Hkx % यह नारंगी रंग का चमकीला कीट होता है। इस कीट के भृंग (भौंरा) एवं इल्ली दोनों पौधे को नुकसान पहुँचाते हैं। भृंग अंकुरण के बाद पौधों की प्रारम्भिक अवस्था की पत्तियों को खाकर क्षति पहुँचाते हैं। इनका आक्रमण अधिक होने पर पत्तियों में केवल शिराऐं ही दिखाई देती हैं तथा कई बार छोटे पौधे पत्तियाँ रहित हो जाते हैं। नवांकुरों पर प्रारंभ के 21 दिनों तक इनका अधिक प्रकोप होने से फसल पूरी तरह नष्ट हो सकती है।

,ihyduk Hkx % इस कीट के वयस्क एवं भृंग पौधों को क्षति पहुँचाते हैं। भृंग हल्का पीलापन लिए हुए एवं छोटे आकार के होते हैं। अंकुरण के बाद से ही पौधों पर इनका प्रकोप दिखाई देने लगता है। भृंग पत्तियों की निचली सतह पर चिपके होते हैं तथा वह स्थान सूखकर जाला स्वरूप दिखाई देता है। नवांकुरों एवं पौधों की प्रारम्भिक अवस्था में इनका अधिक प्रकोप हो जाने से फसल पूरी तरह नष्ट हो सकती है।

Qy eD[kh % प्रौढ़ मक्खी नवविकसित मुलायम फलों के अन्दर अण्डे देती है। अण्डों से निकली इल्लियाँ फल के गूदे को खाती है। फल मक्खी से ग्रसित फल छोटी अवस्था में ही टेढ़े–मेढ़े दिखाई देते हैं तथा क्षतिग्रस्त फल उपयोग योग्य नहीं रहते हैं। अव्यवस्थित फसल एवं समय पर उपयुक्त कृषि क्रियाऐं नहीं होने पर इसके प्रकोप से 35–50 प्रतिशत फल क्षतिग्रस्त हो जाते हैं जिससे उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

fppMh@c#Fkh@ekbV l % शुष्क क्षेत्र की जलवायु में काचरी के पौधों पर माईट्स का प्रकोप बढ़ता जा रहा है। छोटे–छोटे कत्थई रंग के अधिक संख्या में यह कीट पत्तियों पर घूमते नजर आते हैं एवं इन पर जाला बना दिखाई देता है तथा इनका रस चूसकर पौधों को कमजोर कर देते हैं। ग्रीष्मकालीन फसल में जब धूल भरी आंधियाँ चलती हैं उस समय पौधों की पत्तियों पर रेत जम जाने से अथवा वर्षाकालीन फसल में सूखे का अंतराल अधिक हो तो इस कीट का प्रकोप बढ़ जाता है। यदि पौधों की प्रारम्भिक अवस्था में ही इनका प्रकोप अधिक हो जाता है तो फसल बुरी तरह प्रभावित हो जाती है।

i.k tho & pik@ek;yk] gjk rsyk % यह हरे या हल्के काले रंग के छोटे–छोटे कीट पौधों का रस चूसते हैं। पौधों की प्रारम्भिक अवस्था में इनका प्रकोप अधिक होने पर यह कमजोर हो जाते हैं तथा पत्तियाँ व नवविकसित प्ररोह सूखने लगते हैं। ये कीट लसलसा पदार्थ छोड़ते हैं जिससे पत्तियों व शाखाओं पर काला मल जम जाता है।

dhV fu;=.k

1. प्रक्षेत्र प्रबन्धन तकनीकी अपनाकर व्यवस्थित फसल उत्पादन से खेती करें।
2. प्रक्षेत्र में सब्जियों की लगातार खेती के लिए उचित फसल चक्र अपनायें।
3. खेत की तैयारी के समय मेड़ बन्दी एवं बाड़ बन्दी के पेड़–पौधों की उचित सम्भाल करें तथा उन पर कीटनाशी दवा का छिड़काव भी करें। खेत व

उसके आस–पास की भूमि को खरपतवारों से मुक्त एवं साफ–सुथरा रखें।

4. ग्रीष्म ऋतु में खेत की मिट्टी पलटने वाले हल से गहरी जुताई कर सप्ताह भर के लिए खुला रखें जिससे तेज धूप में कीड़ों के अण्डे एवं प्यूपा नष्ट हो जाते हैं।

5. कद्दू का लाल भृंग एवं ऐपीलेकना भृंग प्रातःकाल सक्रिय होते हैं तथा फसल पर कम संख्या में होने पर इनको हाथ से पकड़कर नष्ट किया जा सकता है। इनके प्रभावी नियंत्रण के लिए एक किलोग्राम मिथाइल पेराथियान (2 प्रतिशत) चूर्ण को 10 किलोग्राम राख के साथ मिलाकर पौधों पर प्रातःकाल भुरकाव करें। इस मिश्रण को टाट की थैली में भरकर छोटे पौधों पर भुरकाव करने से भृंग इन पर नहीं बैठते हैं।

6. कद्दू का लाल या ऐपीलेकना भृंगों का प्रकोप ज्यादा होने पर इनके नियंत्रण के लिए 5 प्रतिशत मेलाथियान या कार्बेरिल अथवा 2 प्रतिशत मिथाइल पेराथियान चूर्ण की 25 किलोग्राम मात्रा प्रति हैक्टेयर की दर से पौधों पर सुबह के समय भुरकाव करें। भुरकाव प्रातःकाल ही करें क्योंकि इस समय नमी के कारण कीटनाशी पत्तियों की सतहों पर चिपक जाता है एवं इन पर बैठने से भृंग कीट नष्ट हो जाते हैं। फसल में प्रभावी नियंत्रण के लिए मेलाथियान 50 ई.सी. (1 मि. ली.) या डाईमिथोएट 30 ई.सी. (1 मि.ली.) या कार्बेरिल डब्ल्यू पी. (2 ग्राम) दवा का प्रति लीटर पानी की दर से घोल का 10–15 दिनों के अन्तराल पर छिड़काव करें।

7. फल मक्खी के नियंत्रण के लिए फूल व फल बनने की प्रारम्भिक अवस्था के समय मेलाथियान 50 ई.सी. या डाईमिथोएट 30 ई.सी. एक मिलीलीटर दवा का प्रति लीटर पानी की दर के घोल का छिड़काव करें तथा प्रकोप अधिक होने पर 8–10 दिन पश्चात् पुनः छिड़काव करें। फसल में फल मक्खी की रोकथाम के लिए एक किलोग्राम गुड़ एवं 20 मिलीलीटर मेलाथियान दवा का दस लीटर पानी में घोल तैयार कर पौधों पर छिड़काव किया जा सकता है जिससे प्रौढ़ कीट आकर्षित होते हैं तथा दवाई युक्त पौधे के भागों को खाने से मर जाते हैं। इसी तरह घोल की 50–100 मिलीलीटर मात्रा मिट्टी या प्लास्टिक के बर्तनों में भरकर खेत में कई जगहों पर रखा जाए तो वयस्क कीट प्रलोभन में आकर इनमें गिरकर नष्ट हो जाते हैं।

8. बरुथी (माईट्स) का इस फसल में रासायनिक दवाओं से प्रभावी नियंत्रण नहीं हो पा रहा है। इसके प्रभाव को रोकने एवं नियंत्रण के लिए खेत की समय–समय पर निगरानी एवं उचित सिंचाई प्रबंधन करें। फसल की प्रारम्भिक अवस्था में इस कीट के लक्षण दिखाई देवें तो मेटास्टिाक्स (25 ई.सी.) 1.5 मि.ली./लीटर दवा के घोल का पूरे पौधे पर अच्छी तरह से छिड़काव करें। प्रकोप अधिक होने पर कोलेनल–सस (डाइकोफाल 18.5 ई.सी.) 2.5 मि.ली./लीटर दवा के घोल का पत्तियों की ऊपरी व निचली सतहों पर छिड़काव करें।

9. पर्ण जीव **&** चेपा/मोयला, हरा तेला जैसे रस चूसने वाले कीड़ों का उचित समय पर नियंत्रण बहुत ही जरूरी है तथा इसके लिए इमिडाक्लोरोपिड (0.3 मि.ली.), रोगोर (1 मि.ली.) या मेलाथियान (1 मि.ली.) दवा का प्रति लीटर पानी के घोल का छिड़काव नियमित अन्तराल पर करें।

10. संस्थान में काचरी की सुरक्षा प्रबंधन के लिए किये गये अनुसंधान कार्यों के निष्कर्षों से यह पाया गया कि अंकुरण पश्चात् नवोदित पौधों पर मिथाइल पेराथियान एवं राख के मिश्रण का प्रातःकाल भुरकाव तथा बुवाई पश्चात् के 18–25 (पहली अंतराशस्य व पौधों की छँटाई किया के बाद), 30–35 (नर फूलों के खिलने का प्रारंभिक

समय) एवं 45–50 (मादा फूल खिलने व फल जमाव का प्रारंभिक समय) दिनों बाद के क्रम में इमिडाक्लोरोपिड (0.3 मि.ली.), मिथाइल डिमेटोन (1.5 मि.ली.) एवं डाईमिथोऐट (1.5 मि.ली.) दवा का प्रति लीटर पानी की दर से घोल के छिड़काव का समेकित उपयोग से फसल में कीड़ों से प्रभावी बचाव एवं नियंत्रण के लिए सर्वाधिक उपयुक्त रहा है।

¼[k½ ie[k jkx ,o fu;=.k

कुष्माण्ड कुल की सब्जियों में होने वाली बीमारियों जैसे – फल विगलन (fruit rot), चूर्णी फफूँद/छाछ्या (powdery mildew), रोमिल फफूँद/तुलासिता (downy mildew), याम वर्ण/रूक्ष रोग (anthracnose), झुलसा (blight), पर्णदाग (leaf spot), जड़ विगलन/म्लानि (wilts), जड़ गाँठ रोग (nematodes), जीवाण्विक (bacterial diseases) एवं विषाणु रोगों (viral diseases) में से कुछ प्रमुख रोग काचरी में भी पाये गये हैं परंतु इनके प्रकोप का स्तर तथा प्रभाव फसल में प्रबंधन, सुरक्षा कार्य एवं उस समय की वातावरणीय स्थितियों पर निर्भर होता है। काचरी में बीमारियों द्वारा कम से कम नुकसान हो इसलिए इनका समय पर प्रभावी बचाव एवं नियंत्रण जरूरी होता है तथा इस कार्य को फसल सुरक्षा प्रबंधन घटक के रूप में अपनाना चाहिए, जो कि निम्नानुसार वर्णित हैं–

1. प्रक्षेत्र/खेत की स्वच्छता ही बीमारियों से बचाव का एक सरल उपाय है इसके लिए रोगग्रस्त पौधों एवं खरपतवारों के अवशेषों को समय–समय पर जलाकर नष्ट करते रहना चाहिए। खेत में उचित जल निकास की व्यवस्था रखें तथा सिंचाई प्रबंधन एवं फसल उत्पादन के लिए नाली या बूँद–बूँद तकनीकी से खेती कर उन्नत कृषि क्रियाओं को अपनावें।
2. स्वस्थ फसल के लिए बीजों को उचित दवा से उपचारित कर बुवाई कार्य करें।
3. फसल में छाछ्या रोग के अधिक लक्षण दिखाई देने पर इसके नियंत्रण के लिए कैरेथन एस. एल. (एक मि.ली. दवा प्रति लीटर पानी) के घोल का 15–20 दिनों के अन्तराल पर छिड़काव करें।
4. फसल में तुलासिता रोग की रोकथाम के लिए डाईथेन एम–45, मैन्कोजेब या रिडोमिल एम. जेड. (2 ग्राम दवा प्रति लीटर पानी) के घोल का छिड़काव करें।
5. फसल में श्याम वर्ण रोग से बचाव के लिए बीजों को बुवाई से पहले बेवेस्टिन या थाइरम दवा से उपचारित करें। इस बीमारी का प्रकोप अत्यधिक होने की स्थिति में डाईथेन एम–45 (3 ग्राम), मैन्कोजेब (2 ग्राम) या बेवेस्टिन (1 ग्राम) दवा का प्रति लीटर पानी की दर के घोल का 10–15 दिनों के अन्तराल पर छिड़काव करें।
6. फसल में विषाणु जनित रोगों के फैलाव एवं रोकथाम के लिए इसकी प्रारम्भिक अवस्था से ही रोग ग्रसित पौधों को जलाकर नष्ट कर देवें। स्वस्थ पौधों से पहली या दूसरी तुड़ाई से प्राप्त फलों के बीजों का बुवाई में उपयोग करें। पौधों में विषाणु रोगों को फैलने से रोकने के लिए इस बीमारी को फैलाने वाले कीड़ों का प्रभावी एवं समेकित नियंत्रण जरूरी है जिसके लिए बुवाई के 18–25, 30–35 एवं 45–50 दिनों पश्चात् उपयुक्त कीटनाशी दवाओं का छिड़काव करें।

¼x½ vdhVuk'kh tho ,o jkdFkke

सब्जी फसलों में कीड़ों के अतिरिक्त कुछ ऐसे जीव भी हानि पहुँचाकर इनको प्रभावित करते हैं तथा इन जीवों को अकीटनाशी (non-insect pests) कहा

जाता है। काचरी फसल में कुछ प्रमुख जीव–जंतु जैसे जंगली छिपकली, गिलहरी, चूहा, पक्षी (तीतर, मोर, तोता, बुलबुल आदि), खरगोश, हिरण, सूअर, नील गाय इत्यादि बीज बुवाई, अंकुरण एवं पौधों की प्रारंभिक अवस्था से ही क्षति पहुँचाते हैं तथा इनका प्रकोप यदि फसल की प्रारंभिक अवस्थाओं अथवा फलन के समय अधिक होने पर उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव होता है। काचरी की बुवाई के तुरंत बाद से ही जंगली छिपकली, गिलहरी एवं तीतर बीजों एवं नवांकुरों को भारी क्षति (30–40%) पहुँचाते हैं जिससे फसल क्षेत्र में कम अंकुरण एवं पौधों की संख्या के कारण बुवाई कार्य दो से तीन बार दोहराना पड़ जाता है। इसी तरह छोटे एवं पूर्ण विकसित फलों को पक्षियों द्वारा नुकसान (25–30%) पहुँचाया जाता है जिससे विपणन योग्य फलों की मात्रा में कमी आती है। यहाँ खेत बड़े व खुले होते हैं एवं इनकी बाड़ी या तार बंदी नहीं होने से फसल को हिरण, सूअर एवं नील गायों द्वारा नुकसान पहुँचाया जाता है तथा फलन एवं फल पकने के समय यदि इनका लगातार प्रकोप होता है तो 50–60% तक काचरी फसल प्रभावित हो जाती है।

Ckpko rduhd % खेत/प्रक्षेत्र के चारों ओर स्थाई रूप से तार या बाड़ी बंदी द्वारा फसल को जंगली जानवरों के नुकसान से बचाया जा सकता है। बुवाई की प्रारम्भिक अवस्था एवं फलन के समय प्रातः व सायंकालीन गहन रखवाली से अकीटनाशी जीवों व पक्षियों द्वारा होने वाले नुकसान को बचाया जा सकता है।

¼?k½ vtSfod dkjd ,oa cpko ds rjhds

मरूक्षेत्र के वातावरणीय प्रभाव जैसे कम वर्षा व सूखे का अधिक अंतराल, गर्मियों में प्रचंड तापमान के साथ लू के थपेड़े व धूल–भरी आंधियाँ, सर्दियों में न्यूनतम तापमान के साथ शीत लहर व पाले की स्थिति, अचानक मौसम परिवर्तन, बे–मौसम वर्षा व ओले गिरना तथा रेतीली भूमि में पोषक तत्वों की कमी इत्यादि अजैविक कारकों (abiotic factors) के कारण पौधों की वानस्पतिक वृद्धि, फूल व फल जमाव, गुणवत्ता एवं उत्पादकता प्रभावित होती है। यहाँ अधिकतम तापमान के साथ लम्बी समयावधि वाला ग्रीष्मकाल जहाँ एक ओर पौधों की वानस्पतिक वृद्धि को प्रभावित करता है वहीं फूलों में परागण एवं निषेचन क्रियाऐं प्रभावित होने से फल जमाव एवं गुणवत्तायुक्त उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। ग्रीष्मकालीन अगेती फसलों की बुवाई प्रायः दिसम्बर–जनवरी महीनों में की जाती है परंतु जनवरी महीने में कई बार न्यूनतम तापमान में अधिक गिरावट आ जाने से नवोदित पौधे प्रभावित होते हैं एवं यह सर्दी से झुलस कर सूख जाते हैं।

Ckpko rduhd % वातावरणीय रूकावटों एवं अजैविक विकारों की रोकथाम किसी एक या दो कारकों के उपायों से संभव नहीं है परंतु सुनियोजित एवं समेकित उत्पादन तथा सुरक्षा प्रबंधन द्वारा फसलों पर इनका प्रभाव कम से कम किया जा सकता है। शुष्क क्षेत्रीय जलवायु में सब्जी फसलों से उत्तम गुणवत्तायुक्त तथा अधिक उत्पादन के लिए संस्थान द्वारा प्रक्षेत्र विकास एवं प्रबन्धन की एक सुनियोजित योजना का सृजन किया है जिसके अंतर्गत खेजड़ी आधारित काचरी उत्पादन की उन्नत एवं नवोन्वेषित व्यवस्थायें विकसित की हैं जिन्हें अपनाकर किसान यहाँ की विपरीत परिस्थितियों में भी सुनिश्चित उत्पादन के साथ अधिक आय प्राप्त कर सकते हैं। इस तकनीकी में खेजड़ी आधारित प्रक्षेत्र विकास से यहाँ की प्रतिकूल जलवायु की स्थितियों में खेती के लिए अनूकुल वातावरण विकसित किया जाता है।

mRikn izca/ku ,oa izlaLdj.k

बागवानी में फसल उत्पादन के पश्चात् उत्पाद प्रबंधन एवं प्रसंस्करण की अहम भूमिका होती है परन्तु अध्ययनों से यह पाया गया है कि शुष्क क्षेत्रीय

अल्पप्रचलित फल एवं सब्जियों के उत्पाद पर विशेष ध्यान नहीं दिया जा रहा है। यहाँ मेहनत करके इन फसलों से अच्छा उत्पादन तो प्राप्त कर लिया जाता है लेकिन उत्पाद का व्यवस्थित विपणन तथा सुरक्षित भंडारण या प्रस्संकरण करना ही वास्तव में उत्पादन का सही अर्थों में उपयोग करना होता है। इसी तरह यह बात मरूस्थलीय 'खुबाणी' रूपी फल–सब्जी–काचरी के साथ भी है जिसका इस क्षेत्र में वृहद स्तर पर उत्पादन किया जाता है परंतु वैज्ञानिक ढंग से विपणन एवं प्रस्संकरण के अभाव से किसानों एवं इसका उपयोग करने वालों को आवश्यक लाभ नहीं मिल रहा है। काचरी के ताजा फलों की व्यवस्थित विपणन व्यवस्था तथा इसके प्रसंस्करण से तैयार उत्पादों के व्यापक प्रचार–प्रसार आज के समय की महत्वपूर्ण आवश्यकता है।

¼v½ Qy foi.ku

व्यावसायिक जागरूकता से मरूक्षेत्र का किसान अब काचरी की वर्षा एवं ग्रीष्म कालीन फसल उत्पादन ले रहे हैं परंतु विपणन के उचित तरीकों को नहीं अपनाने से ताजा फलों का बाजार से पूरा भाव नहीं ले पा रहे हैं। सामान्यतः ताजा फलों को एक साथ एकत्रित कर मंडी ले जाते हैं जिससे बिना श्रेणीगत होने से उचित मूल्य नहीं मिल पाता है। इसलिए काचरी फलों को तीन श्रेणियों क्रमशः सबसे बड़े, सामान्य एवं छोटे आकार में विभक्त करना सर्वाधिक उपयुक्त रहता है। वर्गीकरण द्वारा सामान्य आकार के एक समान ताजा फलों को मंडी में विपणन के लिए तथा छोटे आकार के फलों को प्रस्संकरण के उपयोग में लेना सर्वाधिक लाभप्रद रहता है। काचरी फसल उत्पादन तथा उत्पाद एवं प्रस्संकरण प्रबंधन तकनीकियों को एकीकृत व योजनाबद्ध ढंग से अपनाकर किसान एक हैक्टेयर फसल क्षेत्र से लगभग दो लाख रूपये की आय प्राप्त कर सकते हैं।

¼c½ Qy mi;kx ,o iLldj.k

¼1½ lfCt;k % काचरी के पूर्ण विकसित एवं पके ताजा फलों का उपयोग विविध स्वाद की सब्जियों के उपयोग में एकल अथवा संयोजनों से मिश्रित सब्जियाँ जैसे – ग्वारफली, चँवलाफली, मोठफली, आलू, टिण्डा, लौकी, लोइया (मतीरा), ककड़ी आदि को पकाकर तैयार किया जाता है। इसी तरह टमाटर की भाँति काचरी के ताजा फलों का उपयोग सभी तरह की दालों या साबुत चना, मोठ, मूँग, मसूर, चँवला आदि में विशेष स्वाद (खटाई) के लिये प्रयोग किया जाता है। काचरी को सुखाकर तैयार किये गये साबुत फल, छल्ले, कूट्टा या चूर्ण का उपयोग एक विशेष स्वाद के लिए कई प्रकार की ताजा एवं सूखी सब्जियों के साथ जिसमें **ipdVk** प्रमुख है तथा दालों में प्रयोग किया जाता है। इसी तरह ताजा या सूखी ग्वारफली के साथ काचरी तथा दही से तैयार सब्जी–रायता का भी प्रचलन है।

XokjQyh&dkpjh dh fof/k % ग्वारफली एवं काचरी के संयोजन से पकाकर तैयार सब्जी रसीली, स्वादिष्ट एवं गुणकारी होती है। इस क्षेत्र में इन दोनों के संयोजनों एवं विविध प्रकार के मिश्रिण से तैयार सब्जियों को पकाकर परोसा जाता है।

Lkkexh % काचरी के ताजा फल (500 ग्राम), हरी ग्वारफली (500 ग्राम), प्याज (100 ग्राम), हरी मिर्च (4–5 फल), लहसुन (10–12 कलियां), हल्दी, लाल मिर्च तथा धनियाँ पाउडर (एक–एक चम्मच या स्वादानुसार), हींग, जीरा, राई, लौंग (आवश्यकतानुसार), नमक (स्वादानुसार) एवं तेल (100–150 ग्राम)।

Ckukus dh fof/k % काचरी के ताजा फलों एवं ग्वारफली को अच्छी तरह साफ कर छोटे–छोटे टुकड़ों में काट लेवें, साथ ही प्याज, हरी मिर्च एवं लहसून को भी काटकर तैयार करें। कड़ाही में तेल के साथ प्याज, हरी मिर्च व लहसून एवं मसालों को

पकावें तथा काचरी एवं ग्वारफली को मिलाकर सब्जी की तरह पका लेवें।

¼2½ vpkj % काचरी के छोटे एवं ताजा फलों का उपयोग अचार तैयार करने में किया जा सकता है तथा इसका अचार भी कच्ची कैरी (आम) की तरह ही स्वादिष्ट एवं रसीला होता है। इसको निम्नलिखित सामग्री एवं विधि से तैयार किया जा सकता है।

lkexzh % ताजा फल (एक किलोग्राम), हल्दी, मिर्च व धनियाँ पाउडर (25–25 ग्राम), नमक (25 ग्राम या स्वादानुसार), साबुत राई, मैथी, सौंफ (25–25 ग्राम), लौंग, काली मिर्च, सौंठ व बड़ी इलायची (5–5 ग्राम) एवं सरसों का तेल (600 ग्राम)।

cukus dh fof/k % पूर्णविकसित एवं ताजा फलों को साफ पानी से धो कर 5 मिनट तक उबलते हुए गर्म पानी में रखें। इस तरह तैयार फलों पर चाकू से तीन–चार लम्बे चीरे लगा देवें अथवा इनको दो भागों में भी काटा जा सकता है। साबुत मसालों को कूट कर रवेदार बना लेवें। बड़े भगोने में 200 ग्राम सरसों के तेल को अच्छी तरह से गर्म होने पर उसमें मसालों को पकावें, ततपश्चात् काचरी के कटे फलों को भी अच्छी तरह मिलावें तथा भगोने को आँच से नीचे उतार कर पुनः मिलाकर कुछ समय पश्चात् इस पर कपड़ा बाँधकर 2–3 घण्टे धूप में रखें। इस तरह तैयार फलों को काँच के मर्तबान में भर लेवें तथा 400 ग्राम तेल को गर्म कर ठण्डा होने के बाद मर्तबान में ऊपर से भर देवें। मर्तबान का मुँह चार–पाँच दिनों तक कपड़े से ढका रखें तथा अचार को हिलाते रहना चाहिए।

¼3½ pVuh % खट्टी–मीठी एवं तीखे स्वाद वाली कई प्रकार की चटनियों में से काचरी की चटनी का एक विशेष स्वाद के लिए स्थान है। काचरी के ताजा या सूखे फलों को विविध प्रकार के मिश्रण एवं स्वादयुक्त चटनियाँ बनाने के उपयोग में लिया जाता है तथा इनको अलग–अलग तरीकों से तैयार किया जाता है। निम्नलिखित एक विधि से इसकी स्वादिष्ट चटनी तैयार की जा सकती है।

Lkkexzh % काचरी के ताजा फल (1 किलोग्राम), हरी मिर्च व लहसुन (50–50 ग्राम), मिर्च, धनियाँ व हल्दी पाउडर (25–25 ग्राम), जीरा (25 ग्राम), काली मिर्च व लौंग (5–5 ग्राम), सरसों का तेल (250 ग्राम) व नमक स्वादानुसार।

Ckukus dh fof/k % पूर्णविकसित एवं ताजा फलों को साफ पानी से धो कर 5 मिनट तक उबलते हुए गर्म पानी में रखें तथा इनको छोटे–छोटे टुकड़ों में काट लेवें। इसी तरह हरी मिर्च एवं लहसून को साफ करके अच्छी तरह से कूट लेवें। कड़ाही में सरसों का तेल गर्म कर इसमें हरी मिर्च व लहसून के साथ मसालों को अच्छी तरह से पका लेवें, ततपश्चात् फलों के कटे टुकड़ों को मिलाकर धीमी आँच पर 10–15 मिनट तक पकावें। इस तरह तैयार चटनी को चौड़े मुँह की बोतल में भरकर ठण्डे स्थान या फ्रिज में रखना चाहिए।

¼4½ lq[kh dkpjh ,oa ikmMj ¼dpp.k½ % काचरी के ताजा फलों का सर्वाधिक उपयोग इनको सुखाकर वर्षभर सब्जी, चटनी आदि के प्रयोग के लिये भंडारित किया जाता है। इसी तरह सुखाकर भंडारित काचरी का व्यावसायिक स्तर पर इसका पाउडर (कचचूर्ण) तथा विभिन्न प्रकार के त्वरित उपयोगी मसाला (ready to use spice powder) तैयार करने के उपयोग में लिया जाता है। काचरी प्रस्संकरण में सुखाने के अध्ययनों से यह पाया गया कि इसके दस किलोग्राम ताजा फलों को सुखाने पर लगभग एक किलोग्राम सूखा उत्पाद प्राप्त होता है। व्यावसायिक स्तर पर प्रस्संकरण से सूखी काचरी की उपयोगिता तथा इस क्षेत्र में फसल उत्पादन एवं स्वरोजगार के लिए सर्वाधिक उपयुक्त है क्योंकि इसके एक हैक्टेयर फसल क्षेत्र से लगभग 100 क्विंटल फलोत्पादन तथा इनसे 10 क्विंटल सूखी काचरी तैयार हो जाती है।

O;kolkf;d dkpjh Qly mRiknu ,o mRikn ic/ku d fy, lLFkku }kjk fodflr rduhfd;k & Qy oxhdj.k] ilLdj.k rFkk cht mRiknu

बाजार में सूखी काचरी की सर्वाधिक माँग है तथा वर्तमान में यह थोक मूल्य रूपया 60–100 प्रति किलोग्राम की दर से बेची जाती है। सुखाकर तैयार उत्पाद को प्लास्टिक के डिब्बों, पॉलीथीन की थैलियों या पाउच में भरकर लंबे समय तक भंडारित किया जा सकता है। पूर्ण विकसित, स्वस्थ एवं ताजा फलों को साफ कर निम्नवर्णित विधियों से सुखाने के लिए तैयार किया जाता है :–

(अ) साबुत फलों को छीलकर चिकनी सतह या पोलीथीन की चादर पर फैलाकर अथवा माला रूप में पिरोकर सुखावें ।

(ब) फलों से छिलका उतारकर गोल–गोल छल्ले बना लेवें तथा चिकनी सतह, पोलीथीन की चादर पर फैला कर अथवा माला बना कर सुखावें।

(स) छिलके उतारे हुए साबुत अथवा कटे फलों को बिजली या सौर ऊर्जा चलित मशीन में रखकर सुखावें।

(द) काचरी किस्म एएचके–119 के फलों को बिना छिलका उतारे ही इनको गोल–गोल छल्लों में काटकर सुखाना तथा यह कचचूर्ण/पाउडर तैयार करने की सर्वाधिक उपयुक्त विधि है।

cht mRiknu rdudh

काचरी किस्मों के बीज उत्पादन के लिए फसल की वह सभी तकनीकियाँ एवं प्रबंधन व्यवस्थायें अपनानी होती हैं जिससे स्वस्थ एवं भरपूर पैदावार प्राप्त की जा सके। इसी के साथ किस्म की आनुवंशिकीय लक्षणों एवं शुद्धता को बनाये रखने के लिए विशेष बातों का ध्यान रखना होता है क्योंकि काचरी में पर–परागण क्रिया से निषेचन एवं फल जमाव होता है। इस सिद्धांत को ध्यान में रखकर एक समय में काचरी की एक ही किस्म का बीज उत्पादन एक स्थान पर किया जा सकता है तथा इस फसल क्षेत्र से 500–800 मीटर की दूरी में इसकी दूसरी किस्म या प्रजाति के पौधे/फसल नहीं उगाई जा सकती है। इसी तरह कुकुमिस प्रजाति जैसे – मट–काचरी, फूट ककड़ी (काकड़िया), ककड़ी, सलाद ककड़ी, आर्या ककड़ी, खरबूजा आदि फसलों की किस्मों एवं इनके स्वतः उगे पौधे भी काचरी बीज उत्पादन क्षेत्र से 500–800 मीटर की दूरी तक नहीं होने चाहिए क्योंकि इन सभी कुकुमिस प्रजातियों में आपसी पर–परागण क्रिया से फल जमाव होते हैं जिससे इनकी आनुवंशिकीय शुद्धता प्रभावित हो जाती है। काचरी, मट–काचरी, फूट ककड़ी एवं ककड़ी यहाँ की स्थानीय प्रजातियाँ हैं अतः इनके पौधे इस क्षेत्र के सभी खेतों में फसलों के साथ स्वतः ही उगते हैं तथा इन प्रजातियों के पौधों की प्रति हैक्टेयर संख्या भी अधिक पायी गई है जो कि कुछ प्रमुख फसलों के लिए यह खरपतवार भी बन जाते हैं, जब कि परम्परागत खेती में इनके स्वस्थ एवं उपयोगी पौधों को रखकर फलोत्पादन किया जाता है। अतः इन परिस्थितियों में काचरी की किस्मों के बीज उत्पादन के लिए फसल प्रबंधन में विशेष ज्ञान की आवश्यकता होती है।

शुष्क एवं अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में काचरी का बीज उत्पादन ग्रीष्म व वर्षाकालीन फसलों से सफलतापूर्वक किया जा सकता है तथा बुवाई कार्य के लिए मध्य फरवरी एवं मध्य जुलाई का समय सर्वाधिक उपयुक्त है। बीज उत्पादन के लिए एक ही किस्म (एएचके–119) की बुवाई एक फसल क्षेत्र में की जाती है तथा नाली अथवा बूँद–बूँद तकनीकी से फसल उत्पादन सर्वाधिक सुरक्षित एवं उपयुक्त पाया गया है। बीज उत्पादन के लिए खेत में बीजों की बुवाई कतारों एवं निश्चित स्थानों पर ही की जाती है तथा एक बुवाई स्थल पर 2–3 बीजों की बुवाई की जाती है। अंकुरण

पश्चात् जब पौधों में 2–4 वास्तविक पत्तियाँ आ जाती हैं अथवा 18–21 दिनों पर प्रत्येक बुवाई स्थल पर एक स्वस्थ पौध रखकर शेष निकाल दिये जाते हैं। इसी समयावधि में पूरे फसल क्षेत्र को विधिवत जाँचा जाता है जिससे इस प्रजाति एवं अन्य कुकुमिस प्रजाति के स्वतः उगे पौधे फसल क्षेत्र में नहीं रह पायें एवं यह क्रिया लगातार 2–3 बार क्रमशः 18–21, 25–35 एवं 45–50 दिनों पर की जानी चाहिए। काचरी किस्म की आनुवंशिकीय शुद्धता बनाये रखने के लिए इसके फसल क्षेत्र के पास से 500–800 मीटर भू–भाग की भी 2–3 बार गहन निगरानी करनी होती है एवं उपरोक्त वर्णित प्रजातियों के पौधे होने पर उन्हें समय–समय पर निकालते रहना चाहिए।

बीज उत्पादन के लिए काचरी की फसल में अंकुरण पश्चात् से पहली तुड़ाई तक प्रक्षेत्र की 3–4 बार गहन जाँच करनी होती है, जिससे अवांछनीय पौधों को समय–समय पर निकाला जा सके। खेत में यह कार्य क्रमशः बुवाई पश्चात् के 18–21 दिनों पर जब नवांकुरों की छंटनी की जाती है, 25–35 दिनों पर जब पौधों में नर एवं मादा फूल खिलना प्रारम्भ होते हैं, 45–50 दिनों पर जब फल जमाव प्रारंभ होता है तथा 65–70 दिनों पर जब फल परिपक्व एवं पहली तुड़ाई प्रारंभ की जाती है, तब करना सर्वोत्तम पाया गया है। काचरी में पहली तुड़ाई के समय पूरे फसल क्षेत्र का निरीक्षण कर इसके मध्य क्षेत्र से बीज संग्रहण के लिए फलों को इकट्ठा करना सर्वाधिक उपयुक्त पाया गया है तथा खेत के मध्य क्षेत्र की फसल से लगातार 3–4 तुड़ाई के फलों को ही बीज उत्पादन के उपयोग में लेना चाहिए। तुड़ाई पश्चात् फलों को सुरक्षित जगह पर संग्रहित कर पुनः एक समान फलों की छंटनी कर उन्हें बीज संग्रहित करने के लिए दो टुकड़ों में काट देना चाहिए। कटे फलों को पोलीथीन की चादर में बाँध लेवें अथवा प्लास्टिक की टंकियों में भरकर 2–3 दिन तक रखें। ततपश्चात् इनको पानी में धोने पर गले छिलके एवं बीज अलग हो जाते हैं तथा बीजों को छलनी में लेकर पुनः पानी से धो कर छायादार स्थान पर सुखा दिया जाता है। सूखे बीजों को अच्छी तरह साफ कर पोलीथीन की थैलियों या प्लास्टिक के डिब्बों में भरकर 4–5 वर्षों तक बुवाई के लिए सुरक्षित रखा जा सकता है।

❁❁❁❁❁

भाकृअनुप
ICAR

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

Agrisearch with a human touch